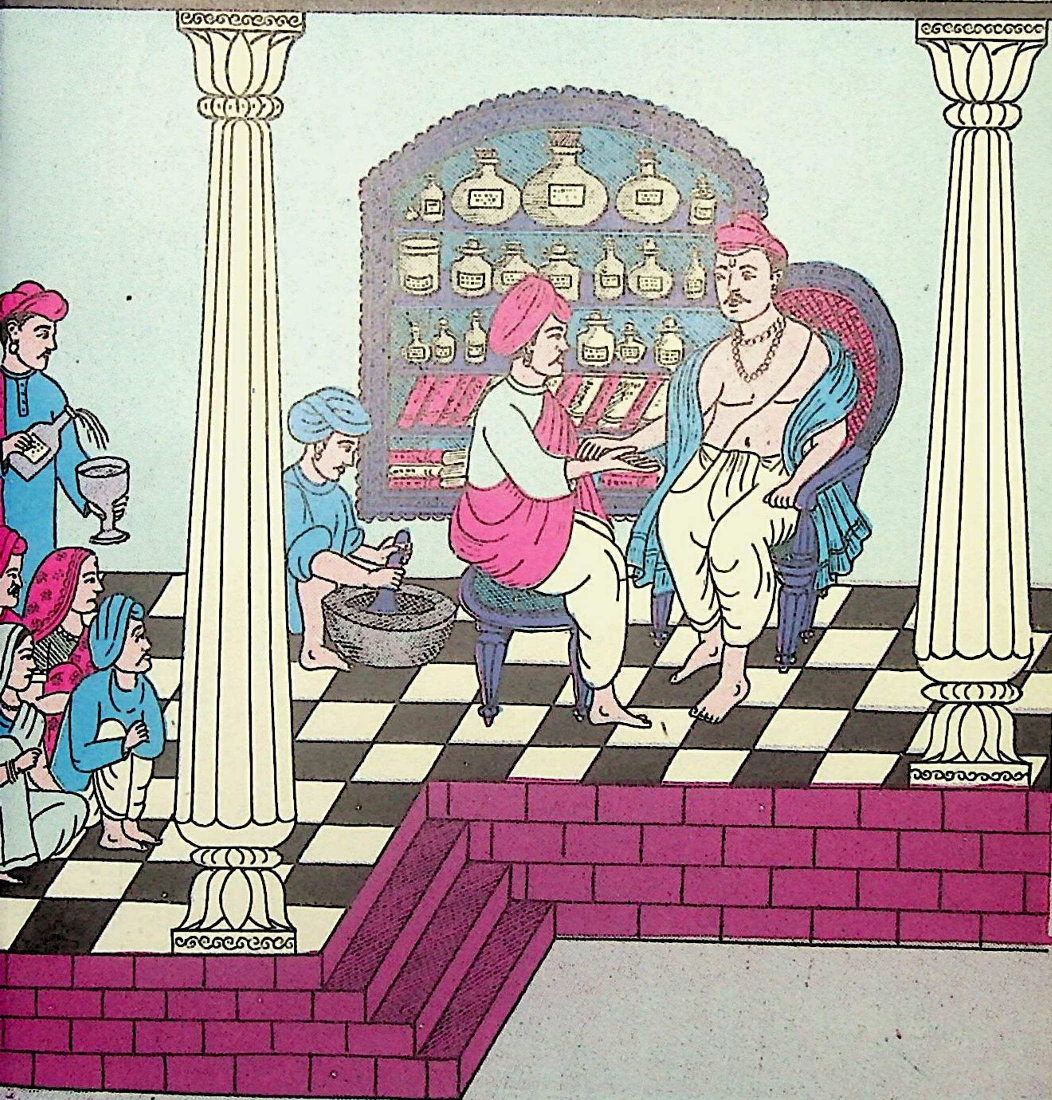
नाडीदर्पण



खेमराज श्रीकृष्णदास बम्बई प्रकाशन



॥ श्रीः ॥

अथ नाडीदर्पणः।



पाठकज्ञातीयमाथुरश्रीकृष्णलालतनयदत्त-
रामेण सङ्कलितः, स्वकृतभाषाटीकया
विभूषितः संशोधितश्च ।



मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,™

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण : सितंबर २०१०, सम्वत् २०६७

मूल्य : ३० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

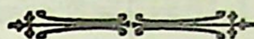
Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshwar Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013

श्रीः ।

नाडीदर्पणस्य-विषयानुक्रमणिका ।



इति विषयानुक्रमणिका ।

श्रीगणेशाय नमः।

अथ नाडीदर्पणः।

भाषाटीकासहितः।

प्रथमावलोकः।

श्रीमन्तं जगदीश्वरं गदगदाधारं च धन्वन्तरि-
मम्बां श्रीजगदम्बिकाप्रतिकृतिं श्रीकृष्णलालाभिधम्।
तातं कृष्णपरावतारमहिमं नत्वा मुहुः संयतः
श्रीकृष्णाङ्घ्रिसरोरुहद्वयसुधाधारामिलिन्दायितः॥ १॥
श्रीमन्माथुरमण्डलाभिजननः श्रीदत्तरामाभिधो
दृष्ट्वा तन्त्रसमूहमूहविधयाऽऽलोड्य स्वयं यत्नतः।
बालानां सुखहेतवे मतिमतामानन्दसंप्राप्तये
नाडीदर्पणनामधेयकमिमं ग्रन्थं करोम्यादरात्॥ २॥

श्रीमान् जगदीश्वर रोग और आरोग्यके आधार ऐसे श्रीधन्वन्तरि भगवान् तथा जगन्माता (लक्ष्मी) के तुल्य रमा नामक अपनी माताको तथा कृष्णका परावतार ऐसे श्रीकृष्णलाल (कन्हैयालाल) नामक अपने पिताको वारंवार यत्नपूर्वक नमस्कार कर श्रीकृष्णचरणकमलयुगलामृतधाराको पान करता भ्रमर और श्रीमधुपुरीमण्डल। अथवा माथुर द्विज (चौबे) नको मंडल कहिये समूह तिसमें निवास जिसको अथवा जन्म जिसको ऐसा जो दत्तराम संज्ञक मैं सो अनेक शास्त्र समूहको देख और स्वयं विधिपूर्वक यत्नसे मथन कर बालकोंके सुखके लिये और पंडितोंके आनन्दकी प्राप्तिके अर्थ इस नाडीदर्पण नामक ग्रन्थको परम आदरसे करता हूं। यह ग्रन्थ यथा नाम तथा गुणोंमें भी है अर्थात् जैसे दर्पणसे इस प्राणीके संपूर्ण गुण दोष प्रगट होते हैं उसी प्रकार इस ग्रन्थसे नाडियोंके सम्पूर्ण गुण दोष उत्तम रीतिसे प्रगट होते हैं॥ १॥ २॥

वैद्यका प्रथम कर्तव्य।

वाग्भटः-रोगमादौ परीक्षेत तदनन्तरमौषधम्।
ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत्॥ ३॥

वाग्भट ग्रन्थमें लिखा है-वैद्यको उचित है कि, प्रथम रोगकी परीक्षा करे, रोगके जाननेके अनन्तर औषधकी परीक्षा करे, रोग और औषध दोनों जाननेके पश्चात ज्ञानपूर्वक अर्थात् सावधानीके साथ चिकित्सा करे यानी औषध देवे॥ ३॥

लक्षयित्वा देशकालौ ज्ञात्वा रोगबलाबलम् ।
चिकित्सामारभेद्वैद्यो यशः कीर्तिमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥

देश और कालका लक्ष करके और रोगको बली और निर्बल जानके जो वैद्य चिकित्साका प्रारंभ करता है वह यश और कीर्तिको पाता है ॥ ४ ॥

वैद्यराजलक्षण ।

रुग्णावस्थां ततो नाडीं भेषजं पथ्यमेव च ।
देशं कालं च पात्रं च यो जानाति स वैद्यराट् ॥ ५ ॥

जो रोगीकी अवस्था, नाडी, औषध, पथ्य, देश, काल और पात्रको जानता है उसको वैद्यराज कहते हैं ॥ ५ ॥

रोगीके रोगोंके आठ परीक्षा स्थान ।

रोगाक्रान्तशरीरस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत् ।
नाडीं मूत्रं मलं जिह्वां शब्दस्पर्शदृगाकृतिम् ॥ ६ ॥

वैद्य रोगी मनुष्यके आठ स्थानोंकी परीक्षा करे। जैसे कि–नाडीपरीक्षा, मूत्रपरीक्षा, मलपरीक्षा, जिह्वापरीक्षा, शब्दपरीक्षा, स्पर्शपरीक्षा, नेत्रपरीक्षा और रोगीकी आकृतिकी परीक्षा ॥ ६ ॥

आठ परीक्षाका फल ।

नानाशास्त्रविहीनानां वैद्यानामल्पमेधसाम् ।
नाड्याद्यष्टपरीक्षाश्च सुखार्थं प्रभवन्ति हि ॥ ७ ॥

अनेक शास्त्रोंके पढनेसे रहित, अल्पबुद्धि वैद्योंके लिये नाडी आदि अष्टविध परीक्षा सुखके अर्थ होवेगी ॥ ७ ॥

आद्यं तावन्नाडिकाविज्ञानादेव वातपित्तकफजनितानामातङ्कानां साध्यासाध्यकष्टसाध्यसभेदकविज्ञानं सुकरत्वेन भिषग्भिरवाप्यतेऽत एव तावन्निरूप्यते ॥ ८ ॥

तहां प्रथम वैद्योंको नाडीके देखनेहीसे वात, पित्त और कफजनितरोगोंका साध्य, असाध्य और कष्टसाध्य सभेदविज्ञान सहजमें प्राप्त हो सकता है, अत एव प्रथम उसी नाडीपरीक्षाका वर्णन करते हैं। प्रथम नाडी देखनेकी आवश्यकता दिखाते हैं॥ ८ ॥

नाडीज्ञानकी आवश्यकता ।

नाडीज्ञानं विना वैद्यो न लोके पूज्यतां व्रजेत् ।
अतश्चातिप्रयत्नेन शिक्षयेद्बुद्धिमान्नरः ॥ ९ ॥

नाडीज्ञानके विना वैद्य संसारमें पूज्य (माननीय) नहीं होता, अतएव बुद्धिमान् मनुष्यको उचित है कि, नाडीज्ञानको सद्गुरुसे अति यत्नपूर्वक सीखे अर्थात् नाडी देखनेका अनुभव करे ॥ ९ ॥

बोधहीनं यथा शास्त्रं भोजनं लवणं विना।
पतिहीना यथा नारी तथा नाडीं विना भिषक् ॥ १० ॥

जैसे बोध विना शास्त्र पढनेकी शोभा नहीं, विना लवण भोजन पदार्थ प्रिय नहीं और पतिके विना स्त्रीकी शोभा नहीं, उसी प्रकार नाडीज्ञानके विना वैद्यकी शोभा नहीं है ॥ १० ॥

नाडीजिह्वार्त्तवादीनां लक्षणं यो न विन्दति।
मारयत्याशु वै जन्तून् स वैद्यो न च शोभनः ॥ ११ ॥

जो नाडीपरीक्षा, जिह्वापरीक्षा और स्त्रीके आर्त्तवकी परीक्षा नहीं जाने वह मूढ वैद्य तत्काल रोगियोंको मारता है इसी कारण ऐसा मूढ वैद्य उत्तम नहीं है ॥ ११ ॥

निदानपंचक।

आदौ सर्वेषु रोगेषु नाडीजिह्वाग्रनेत्रकम्।
मूत्रार्त्तवं परीक्षेत पश्चाद्रुग्णं चिकित्सयेत् ॥ १२ ॥

वैद्य प्रथम सम्पूर्ण रोगोंमें नाडी, जिह्वा, नेत्र, मूत्र, आर्त्तवकी परीक्षा करे, फिर रोगीकी चिकित्सा करे ॥ १२ ॥

नाडीज्ञानं विना यो वै चिकित्सां कुरुते भिषक्।
स नैव लभते लक्ष्मीं न च धर्मं न वै यशः ॥ १३ ॥

जो वैद्य विना नाडीपरीक्षाके जाने चिकित्सा करता है वह धन, धर्म और यशको नहीं प्राप्त होता बरन् उसको अपयशकी प्राप्ति और मूर्ख कहलाता है ॥ १३ ॥

वैद्यके लिये उपदेश।

नाड्या मूत्रस्य जिह्वायाः कुरु पूर्वं परीक्षणम्।
औषधं देहि तज्ज्ञाने वैद्य रुग्णसुखावहम् ॥ १४ ॥

हे वैद्य ! प्रथम नाडी, मूत्र और जिह्वाका परीक्षण कर जब नाडी, मूत्र और जिह्वाकी परीक्षाद्वारा रोगका निश्चयकर लेवै तब रोगीको सुखकारी औषधि दे॥१४॥

यथा वीणागता तन्त्री सर्वान्रागान् प्रभाषते।
तथा हस्तगता नाडी सर्वान् रोगान्प्रकाशते ॥ १५ ॥

जैसे वीणाका तार सम्पूर्ण रागोंकी सूचना करता है, उसी प्रकार हाथकी नाडी सर्व रोगोंको प्रकाशित करती है। इस श्लोकका तात्पर्य यह है कि, जैसे वीणाका तार भी जो बजानेवाले हैं उन्हींको उस तारके रागकी प्रतीति होती है उसी प्रकार हाथकी नाडी भी जो नाडीके जाननेवाले हैं उन्हींको रोग प्रकाशित करती है। जैसे मूर्खके वास्ते तारद्वारा राग नहीं मालूम होता उसी प्रकार मूर्ख वैद्यका नाडी देखना निष्प्रयोजन है ॥ १५ ॥

नाडीलक्षणमज्ञात्वा निदानग्रन्थवाक्यतः।
चिकित्सामारभेद्यस्तु स मूढ इति कीर्त्यते ॥ १६ ॥

जो वैद्य नाडीके लक्षण विना जाने केवल निदान ग्रन्थके वाक्योंसे रोगपरीक्षा कर चिकित्सा करता है वह मूढ (मूर्ख) ऐसा कहलाता है ॥ १६ ॥

निदानपञ्चकादीनां लक्षणं वैद्यसत्तमः।
नाडीं तु संवलीकृत्य चिकित्सामाचरेत्खलु ॥ १७ ॥

इसी कारण उत्तम वैद्य निदानपंचकादिके लक्षण जानके और उनमें नाडीके लक्षण भी मिश्रित (सामिल) करके चिकित्साका प्रारम्भ करे ॥ १७ ॥

कियत्स्वपि च चिह्नेषु ज्ञातेष्वपि चिकित्सितम्।
निष्फलं जायते तस्मादेतच्छृण्वेकचेतसा ॥ १८ ॥

अब कहते हैं कि, बहुतसे चिह्न जानने पर भी चिकित्सा निष्फल हो जाती है अतएव इस नाडीदर्पणग्रन्थमें जो कहा जाता है उसको हे वैद्य ! तू एकाग्र चित्तसे सुन ॥ १८ ॥

नाडीज्ञानकथन।

तत्रादौ प्रोच्यते नाडीपरीक्षातिप्रयत्नतः।
नानातन्त्रानुसारेण भिषगानन्ददायिनी ॥ १९ ॥

तहां प्रथम अनेक ग्रन्थोंके अनुसार वैद्योंको आनन्ददायिनी यत्नपूर्वक नाडी-परीक्षा कहते हैं ॥ १९ ॥

क्वचिद्ग्रन्थानुसन्धानाद्देशकालविभागतः।
क्वचित्प्रकरणाच्चापि नाडीज्ञानं भवेदपि ॥ २० ॥

अब नाडीज्ञानकी परिपाटी कहते हैं कि, कहीं तो नाडीज्ञान ग्रन्थ पढनेसे होता है, कहीं देश कालके जाननेसे और कहीं प्रकरणवशसे नाडीका ज्ञान होता है। तात्पर्य यह है कि, वैद्य केवल ग्रन्थके ही भरोसे न रहे, किन्तु कुछ अपनी भी

बुद्धिसे विचारे यह कौन स्थान है, कौनसा काल है और यह रोगी क्या आहार विहार करके आया है, इस प्रकार अच्छी रीतिसे विचारकर नाडीको कहे ॥ २० ॥

सद्गुरोरुपदेशाच्च देवतानां प्रसादतः ।
नाडीपरिचयः सम्यक् प्रायः पुण्येन जायते ॥ २१ ॥

अब नाडीज्ञानकी उत्कृष्टता दिखाते हैं कि, सद्गुरु अर्थात् सद्वैद्यके बतानेसे और देवताओंकी प्रसन्नतासे तथा पूर्वजन्मके पुण्यकरके नाडीपरिचय होता है, किंतु अपने आप पढनेसे और विना देवकृपाके तथा अधर्मी नास्तिकको नाडी देखनेका ज्ञान नहीं होता है अतएव जिसको नाडीज्ञानकी आवश्यकता होवे वह सद्गुरु और देवसेवा तथा धर्ममें तत्पर होय ॥ २१ ॥

नाडीपरिचयो लोके नच कुत्रापि दृश्यते ।
तेन यत्कथ्यते चात्र तत्समाधेयमुत्तमैः ॥ २२ ॥

नाडीका परिचय अर्थात् नाडी देखनेका ज्ञान इस संसारमें कहीं नहीं दीखता, इसी कारण जो इस ग्रन्थमें कहा जाता है वह उत्तम पुरुषोंको अवश्य जानना चाहिये॥ २२॥

परीक्षणीयाः सततं नाडीनां गतयः पृथक् ।
न चाध्ययनमात्रेण नाडीज्ञानं भवेदिह ॥ २३ ॥

वैद्यको उचित है कि, निरंतर नाडीकी गतिकी परीक्षा किया करे। क्योंकि, केवल पढनेहीसे नाडीका ज्ञान नहीं होता ॥ २३ ॥

नाडीज्ञानमें अभ्यासकी आवश्यकता ।

न शास्त्रपठनाद्वापि न बहुश्रुतकारणम् ।
नाडीज्ञाने मनुष्याणामभ्यासः कारणं परम् ॥ २४ ॥

नाडीके ज्ञानमें शास्त्र पढनेसे अथवा बहुत नाडीसंबंधी वार्त्ताओंके सुननेसे नाडीका ज्ञान नहीं होता, किंतु नाडीज्ञानमें मनुष्योंको केवल अभ्यास ही परम कारण है इससे अभ्यास करे ॥ २४ ॥

नाडीगतिमिमां ज्ञातुं योगाभ्यासवदेकतः ।
शक्यते नान्यथा वैद्य उपायैः कोटिशैरपि ॥ २५ ॥

वैद्यको इस नाडीकी गति जाननेमें समर्थ होना केवल योगाभ्यासके सदृश नाडी देखनेके अभ्याससे ही हो सकता है, अन्य करोडों उपायोंसे भी नाडीज्ञान नहीं होता॥ २५॥

नाडीकी गति जाननेका उपाय ।

जलस्थलनभश्चारिजीवानां गतिभिः सह ।
गतयो ह्युपमीयन्ते नाडीनां भिन्नलक्षणाः ॥ २६ ॥

जल, स्थल और आकाशमें विचरनेवाले जीवोंकी गति (चाल) करके भिन्न-लक्षणा नाडियोंकी गति अनुमान की जाती है, अर्थात् जलचर जीव (जोंक मेंडक आदि) स्थलचरजीव (सर्प, हंस, मोर आदि) और आकाशचारी जीव (लवा-बटेर आदि) ये जैसे चलते हैं इनके सदृश नाडी चलती है। इनमें जिस दोषकी जैसी चाल नाडीकी लिखी है उसको उसी प्रकारकी देखकर वैद्य नाडीको वात-पित्तादिककी नाडी बतावे, अन्यथा नाडीका ज्ञान होना कठिन है ॥ २६ ॥

कस्य कीदृग्गतिस्तत्र विज्ञातव्या विचक्षणैः ।
अध्येतव्यं च तच्छास्त्रं सद्गुरोर्ज्ञानशालिनः ॥ २७ ॥

वैद्य होनेवाले मनुष्यको उचित है कि, उत्तम ज्ञानवान् शास्त्रके ज्ञाता गुरुसे किस जीवकी कैसी गति है इसको सीखे और जो इस नाडीविषयके ग्रन्थ हैं उनको पढे । किसी जगह हमने ऐसा देखा है कि, दश वर्ष तो वैद्यकके ग्रन्थ पढें और गुरुके आगे अनुभव (आजमायश) करे, क्योंकि यह विद्या पढनेका समय बहुत् उत्तम है, इस समय ग्रन्थ हैं और रोगी दोनों उपस्थित हैं, जो ग्रन्थमें पढे उसको गुरुके आगे रोगीपर परीक्षा करे । यदि जो बात समझमें न आवे तो उसको उसी समय गुरुसे पूछ लेय तो संदेह निवृत्त हो जावे. फिर दश वर्ष वनमें रहकर वनवासियोंसे अर्थात् माली, काछी, भील, ग्वारिया आदिसे औषधका नाम और उसके गुण तथा परीक्षा सीखे तब इसको वैद्यक करनेका अधिकार होता है ॥ २७ ॥

कालपरखसे नाडीकी विलक्षणता ।

कल्याणमपि वाऽरिष्टं स्फुटं नाडी प्रकाशयेत् ।
रुजां कालिकवैशिष्ट्याद्भवेत्सापि विलक्षणा ॥ २८ ॥

कल्याण (शुभ) और अरिष्ट (अशुभ) इन दोनोंको नाडी प्रत्यक्ष प्रकाशित करती है। तथा कालके वैशिष्ट्याकरके रोगके समय नाडी विलक्षण हो जाती है॥२८॥

यल्लक्षणा तु नैरुज्ये नोदितायां तथा रुजि ।
वयःकालरुजां भेदैर्भिन्नभावं बिभर्ति सा ॥ २९ ॥

जैसी आरोग्य-पुरुषकी नाडी होती है ऐसी रोगावस्थामें नहीं रहती,

---

१ "वयःकालरुजां भेदैः" लिखनेका यह प्रयोजन है कि, जैसी नाडी बाल्यावस्थामें होती है ऐसी यौवन अवस्थामें नहीं और जैसी यौवन अवस्थामें होती है ऐसी वृद्धावस्थामें नहीं होती । इसी प्रकार प्रातःकाल, मध्याह्न और सायंकालमें पृथक् पृथक् भावसे चलती है तथा प्रत्येक रोगोंमे नाडीकी गति विलक्षण होती है । अर्थात् जैसी ज्वरवान्की नाडी होती है ऐसी अतिसारवान्की नहीं होती और जैसी अतिसारीकी होती है ऐसी ग्रहणीरोगवालकी नहीं होती ॥

इसका यह कारण है कि, अवस्था, काल, रोगोंके भेदकरके नाडी भिन्न भावको धारण करती है अर्थात् विपरीतता ग्रहण करती है ॥ २९ ॥

तदवस्थामतः प्राज्ञः सर्वथा सार्वकालिकीम् ।
ज्ञातुं यतेत मतिमान् लक्षणैः सुसमाहितः ॥ ३० ॥

इसीसे चतुर वैद्यको उचित है कि, उस नाडीके सर्वकालके सदैव लक्षणोंके जाननेके यत्न सावधानतापूर्वक करता रहे ॥ ३० ॥

नाडीके स्पंदनका कारण ।

परिव्याप्याखिलं कायं धमन्यो हृदयाश्रयाः ।
वहन्त्यः शोणितस्रोतः शरीरं पोषयन्ति ताः ॥ ३१ ॥
हृदयाकुञ्चनाद्रक्तं कियदुत्प्लुत्य धामनीम् ।
तत्सञ्चितं तदुत्थं च प्रविश्य चापरास्वपि ॥ ३२ ॥

अव नाडीके चलनेका कारण कहते हैं कि, हृदयके आश्रित धमनी नाडी संपूर्ण देहमें व्याप्त हो रुधिरको स्रोतोंके द्वारा वहन करती है । उसी रुधिरके वहनेसे शरीरको पोषण करती है । उन संपूर्ण धमनी नाडियोंका आश्रय हृदयस्थ रक्ताधार यंत्र है । रक्ताधार यह एक स्थूलमांसनलिका ऊपरकी तरफ कुछ उठी हुई है । नलीसमुदाय धमनी नाडीका मूलभाग है । इसी स्थानसे धमनी नाडियोंकी अनेक शाखा प्रशाखा निकली हैं, ये संपूर्ण देहमें व्याप्त हैं । इस समस्त सूक्ष्म नलाकृति मांसनलीका नाम धमनी है । धमनीमार्गसे हृदयका संचित रुधिर सकल देहमें परिभ्रमण करके देहका पोषण करती है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

व्रजित्वा निखिलं देहं ततो विशति फुप्फुसम् ।
फुप्फुसाद्धृदयं याति क्रियैवं स्यात्पुनः पुनः ॥ ३३ ॥
रुधिरोत्प्लववेगेन धमनी स्पन्दते मुहुः ।
उत्प्लवप्रकृतेर्भेदाद्भेदः स्यात्स्पन्दनस्य च ॥ ३४ ॥
स्थौल्यादिकं धमन्याश्च तत्प्रकृत्यैव जायते ।
तत्प्रकारान्समासेन ब्रुवे वत्स निशामय ॥ ३५ ॥

हृदययन्त्र स्वभावसे ही सदैव खुलता, मुँदता रहता है, जैसे भिस्तीकी सच्छिद्र जलपूर्ण मसकको ऊपरसे दाबनेसे उस मसकके भीतरका जल जैसे छिद्रमें होकर बडे वेगसे निकलता है, उसी प्रकार हृदयके मुँदनेसे हृदयस्थ रुधिरका कितना ही अंश उछलकर तत्संलग्न स्थूल धमनीमें प्रवेश करे है । यह आकुंचन अर्थात् हृदयका मूँदना जितनी देरमें होता है उतने कालमें वह उत्प्लुत रुधिर धमनियोंके

द्वारा समस्त देहमें परिभ्रमण करके फुप्फुसमें जाकर प्राप्त होता है। फुप्फुससे फिर दूसरी वार हृदयमें आता है और उसी प्रकार जाता है। जीते हुए देहमें इसी प्रकार यह क्रिया एक नियमके साथ वारंवार होती रहती है, इस रुधिरके उत्प्लव (उछलने) से सम्पूर्ण धमनी स्पन्दन कहिये फडकती है। रुधिर हृदयमेंसे वारंवार उछलकर धमनीके छिद्रमें प्रवेश होकर वेगके साथ चलता है, इसी कारण धमनी नाडी भी वारंवार तडफती है। यह रुधिरके उत्प्लव प्रकृतिभेदसे धमनीके तडफमें भेद होता है अर्थात् यदि रुधिर मंद वेगसे उछलता है तो नाडी मन्द प्रतीत होती है और रुधिर शीघ्र उछले तो नाडी भी शीघ्रचारिणी होती है। एवं रुधिरके स्वभावानुसार नाडीमें स्थूलता, सूक्ष्मता और कठिनत्वादि धर्म उत्पन्न होते हैं। अब जो जो अवस्था नाडीसे जैसे लक्षण होते हैं उन सबोंको मैं आगे कहता हूँ ॥ ३३-३५ ॥

नाडीके नाम।

हिंस्रा स्नायुर्वसा नाडी धमनी धामनी धरा।
तन्तुकी जीवितज्ञा च शिरा पर्यायवाचकाः ॥ ३६ ॥

हिंस्रा, स्नायु, वसा, नाडी, धमनी, धामनी, धरा, तंतुकी, जीवितज्ञा और शिरा ये नाडीके पर्यायवाचक शब्द हैं अर्थात् ये नाडीके नामांतर हैं ॥ ३६ ॥

नाडीके भेद।

तत्र कायनाडी त्रिविधा। एका वायुवहा, अन्या मूत्रविड-स्थिरसवाहिनी, अपरा आहारवाहिनी इति ॥ ३७ ॥

तहां देहकी नाडी तीन प्रकारकी हैं-एक पवनको बहती है, दूसरी मल, मूत्र, हड्डी और रक्तको बहती है, तीसरी आहारको बहती है ॥ ३७ ॥

कन्दमध्ये स्थिता नाडी सुषुम्नेति प्रकीर्त्तिता।
तिष्ठन्ते परितः सर्वाश्चक्रेऽस्मिन्नाडिकास्ततः ॥ ३८ ॥

नाभिके मध्यमें सुषुम्ना नाडी स्थित है, इसी नाभिचक्र और सुषुम्ना नाडीके चारों तरफ संपूर्ण नाडी स्थित हैं ॥ ३८ ॥

नाभिमध्ये स्थिता नाडी गोपुच्छाकृति सर्वतः।
तिष्ठन्ते परितः सर्वास्ताभिर्व्याप्तमिदं वपुः ॥ ३९ ॥

संपूर्ण नाडी नाभिके बीचमें गोपुच्छके सदृश स्थित हो सर्वत्र फैल रही हैं जिनसे यह देह व्याप्त हो रहा है। जैसे गौकी पूँछ ऊपरके भागमें मोटी होती है और नीचेको क्रमसे पतली होती है, उसी प्रकार नाडियोंको जानना, ये सब नाभीसे निकलकर चारों तरफ फैल गई हैं ॥ ३९ ॥

नाडिकी संख्या।

साद्धांस्त्रिकोट्यो नाड्यो हि स्थूलाः सूक्ष्माश्च देहिनाम्।
नाभिकन्दनिबद्धास्तास्तिर्यगूर्ध्वमधः स्थिताः ॥ ४० ॥

इन मनुष्योंके देहमें छोटी और बडी सब मिलकर (३५००००००) साढे तीन करोड नाडी है, वे नाभिसे बन्धी हुई तिरछी, ऊपर और देहके अधोभागमें स्थित हैं॥ ४०॥

तिस्रः कोट्योऽर्द्धकोटी च यानि लोमानि मानुषे।
नाडीमुखानि सर्वाणि घर्मबिन्दून् क्षरन्ति च ॥ ४१ ॥

ऊपरके श्लोकमें जो साढे तीन करोड नाडी कही हैं, वे मनुष्योंके देहमें जितने रोम हैं वे सब उन नाडियोंके मुख हैं, उनसे पसीना झरता रहता है ॥ ४१ ॥

द्विसप्ततिसहस्रं तु तासां स्थूलाः प्रकीर्तिताः।
देहे धमन्यो धुन्वन्त्यः पञ्चेन्द्रियगुणावहाः ॥ ४२ ॥

उन साढे तीन करोड नाडियोंमें १०७२ एक हजार बहत्तर स्थूल नाडी हैं, वे धमनी पवनको धमाती है और पंचेद्रियोंके गुण (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) को वहाती हैं ॥ ४२ ॥

तासां च सूक्ष्मसुषिराणि शतानि सप्त स्वच्छानि यैरसकृदन्न-
रसं वहद्भिः। आप्यायते वपुरिदं हि नृणाममीषामम्भःस्रवद्भि-
रिव सिन्धुशतैः समुद्रः ॥ ४३ ॥

उन पूर्वोक्त नाडियोंमें छोटे छिद्रवाली स्वच्छ ७०० नाडी हैं, वे सब अन्नरसके वहनेवाली हैं, उस रससे सम्पूर्ण देहका पोषण होता है, जैसे सैकडों नाडियों (सिन्धुओं) के जलसे समुद्र तृप्त होता है ॥ ४३ ॥

आपादतः प्रततगात्रमशेषमेषामामस्तकादपि च नाभिपुरः-
स्थितेन। एतन्मृदङ्ग इव चर्मचयेन नद्धं कायं नृणामिह
शिराशतसप्तकेन ॥ ४४ ॥

नाभिस्थान स्थित सात सौ नाडियोंसे मस्तकसे ले पैरोंतक सम्पूर्ण देह व्याप्त है। जैसे मृदङ्गमें सर्वत्र चर्मकी रस्सी खींची हुई होती है, उसी प्रकार मनुष्यकी देह इन सात सौ नाडियोंसे बद्ध हो रही है ॥ ४४ ॥

सप्तशतानां मध्ये चतुरधिका विंशतिः स्फुटास्तासाम्।
एका परीक्षणीया दक्षिणकरचरणविन्यस्ता ॥ ४५ ॥

१ शतानि सप्त नाड्यस्तु कथिता याः शरीरिणाम्। सम्भूयांगुष्ठमूले तु शिरामेकामधिष्ठिता ॥

पूर्वोक्त सात सौ नाडियोंमें २४ नाडी मुख्य हैं, उनमें भी पुरुषके दहने हाथ और पैरमें स्थित मुख्य एक नाडीकी परीक्षा करनी चाहिये । 'चतुरधिका' इस पदके कहनेसे यह प्रयोजन है कि धमनी नाडी २४ हैं जैसे लिखा है ॥ ४५ ॥

तिर्यक्कूर्मो देहिनां नाभिदेशे वामे वक्रं तस्य पुच्छं तु याम्ये । ऊर्ध्वे भागे हस्तपादौ च वामौ तस्याधस्तात् संस्थितौ दक्षिणौ तौ ॥ ४६ ॥

वक्रे नाडीद्वयं तस्य पुच्छे नाडीद्वयं तथा ।
पञ्च पञ्च करे पादे वामदक्षिणभागयोः ॥ ४७ ॥

मनुष्योंके नाभिदेशमें तिरछा कूर्म (कछुवा) स्थित है, बाईं तरफ उसका मुख है और दहनी तरफ पूंछ है, ऊपरके भागमें बाईं तरफ हाथ हैं और नीचे दक्षिण पैर हैं, उस कच्छपके मुखमें दो नाडी, पूंछमें दो और हाथ पैरोंमें दहनी और बाईं तरफ पांच पांच नाडी जाननी ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

फिर उसी श्लोककी व्याख्या कहते है " तासां मध्ये एकेति " पद लिखनेका यह प्रयोजन है कि, यद्यपि हाथ पैरोंमें पांच पांच नाडी हैं परन्तु उनमें भी पुरुषके दहने हाथ परकी एक एक नाडी मुख्य है और स्त्रीके वाम हाथ पैरकी एक एक नाडी मुख्य है यह अर्थाशयसे जाना जाता है, अतएव वैद्यको इन्हींकी परीक्षा करनी चाहिये जैसे लिखा है ॥

स्त्रीपुरुषोंकी नाडी देखनकी रीति ।

वामे भागे स्त्रिया योज्या नाडी पुंसस्तु दक्षिणे ।
इति प्रोक्तो मया देवि सर्वदेहेषु देहिनाम् ॥ ४८ ॥

स्त्रीके वामभागकी और पुरुषके दहने भागकी नाडी देखे । हे देवि ! यह सर्वदेहधारियोंमें देखनकी विधि मैंने कही है, परन्तु जो नपुंसक हैं उनमें प्रथम यह परीक्षा करे कि, यह स्त्रीषंढ है या पुरुषषंढ, पश्चात् स्त्रीषंढके वाम हाथकी और पुरुष षण्ढके दहने हाथकी नाडी देखे । इनमें समानता सर्वथा नहीं हो सकती और कृत्रिम (बने हुए) हिजडे होते हैं उनकी नाडी यथा प्रकृतिमें स्थित होती हैं और " चरणेति " इस पदके धरनेसे कोई कहता है कि वाम पैरकी नाडीको दहनी गांठके पिछाडीके पार्श्वभागमें देखनी और दहने पैरकी नाडी बाईं ग्रन्थिके पिछाडीके पार्श्वमें देखनी यह श्रेष्ठ पुरुषोंकी आज्ञा है, कोई छः स्थानोंकी नाडी देखना लिखता है ॥४८॥

छः नाडी ।

अङ्गुष्ठमूलं करयोः पादयोर्गुल्फदेशतः ।
कपालपार्श्वयोः षड्भ्यो नाडीभ्यो व्याधिनिर्णयः ॥ ४९ ॥

हाथोंकी नाडी अँगूठेकी जडमें देखे और पैरोंकी नाडी टकनाओंके नीचे देखे, मस्तककी नाडी दोनों कनपटियोंमें देखे, इस प्रकार इन छः स्थानोंकी नाडी देखनेसे व्याधिका यथार्थ निर्णय होता है ॥ ४९ ॥

नाभी आदिकी नाडी देखना ।

नाभ्योष्ठपाणिपात्कण्ठनासोपान्तेषु याः स्थिताः ।
तासु प्राणस्य सञ्चारं प्रयत्नेन विभावयेत् ॥ ५० ॥

नाभी, होंठ, हाथ, पैर, कंठ और नासिकाके समीप भागमें जो नाडी स्थित हों उनमें प्राणोंके संचारको यत्नपूर्वक जाने अर्थात् इन स्थानोंमें सदैव प्राण पवनका संचार होता है, इसीसे अत्यन्त उपद्रवमें इन स्थानोंकी नाडी देखनी चाहिये ॥५० ॥

प्राणबोधक १६ नाडी ।

पाणिपात्कण्ठनासाक्षिकर्णजिह्वान्तमेढ्रगाः ।
वामदक्षिणतो लक्ष्याः षोडश प्राणबोधकाः ॥ ५१ ॥

हाथ, पैर, कंठ, नासिका, नेत्र, कान, जिह्वाका अंत्यभाग और मेढ्र (योनि, लिंग) इनके वामभाग और दक्षिणभागमें नाडी देखनी, क्योंकि ये १६ नाडी प्राणबोधक हैं ऐसा जानना ॥ ५१ ॥

कण्ठनाडी ।

आगन्तुकं ज्वरं तृष्णामायासं मैथुनं क्लमम् ।
भयं शोकं च कोपं च कण्ठनाडी विनिर्दिशेत् ॥ ५२ ॥

आगंतुकज्वर, तृषा, परिश्रम, मैथुन, ग्लानि, भय, शोक और कोप इतने रोगोंको कण्ठनाडी देखकर कहे ॥ ५२ ॥

नासानाडी ।

मरणं जीवनं कामं कण्ठरोगं शिरोरुजाम् ।
श्रवणानिलजान् रोगान्नासानाडी प्रकाशयेत् ॥ ५३ ॥

मरण, जीवन, कामबाधा, कंठरोग, मस्तकरोग, कानके और पवनके रोगोंको नासिकाकी नाडी प्रकाशित करती है ॥ ५३ ॥

उक्त नाडियोंका प्रमाण।

हस्तयोश्च प्रकोष्ठान्ते मणिबन्धेऽङ्गुलिद्वयम्।
पादयोर्नाडिकास्थानं गुल्फस्याधोऽङ्गुलिद्वयम् ॥ ५४ ॥
कण्ठमूलेऽङ्गुलिद्वन्द्वं नासायामङ्गुलिद्वयम्।
एवमप्यङ्गुलिद्वन्द्वमग्रतः कर्णरन्ध्रयोः ॥ ५५ ॥

अब उक्तनाडी किस किस भागमें हैं और वे कितनी बडी हैं यह कहते हैं। तहां दोनों हाथोंके प्रकोष्ठान्तमें जहां मणिबन्ध अर्थात् पहुंचा है उस जगह दो अंगुल नाडी देखनेका स्थान है और पैरोंमें टकनाके नीचे दो अंगुल नाडीका स्थान है तथा कंठकी जडमें अर्थात् हसलीमें दो अंगुल एवं नासिकामें दो अंगुल नाडीका स्थान है। इसी प्रकार दोनों कर्णके छिद्रके अग्रभागमें भी दो दो अंगुल नाडीके परीक्षाका स्थान है। तात्पर्य यह है कि, जब हाथकी नाडी प्रतीत न होवे तब इन स्थानोंकी नाडी देखनी ॥ ५५ ॥ ५५ ॥

जीव और नाडीकी आधीनता।

निस्तुषयव एकस्तत्प्रमाणाङ्गुलं स्यात्
तदुभयमितसद्मन्येव नाडीप्रचारः।
न भवति यदि तस्मिन् गेहिनी गेहमध्ये
कथमिह गृहमेधी तत्र जीवस्तदा स्यात् ॥ ५६ ॥

छिलकारहित एक यवके प्रमाण इस जगह अंगुल मात्र है, ऐसे दो अंगुल प्रमाण स्थानमें नाडी रहती है, यदि देहरूप घरमें नाडीरूप स्त्री न होवे तो जीवरूप तो गृहस्थी है सो क्या करे अर्थात् यावत्काल देहमें नाडी रहती है तबतक जीव है विना स्त्रीके घरमें रहना निंदित है " धिग्गृहं गृहिणीं विना " तात्पर्य यह है कि, जीव पुरुष, नाडी स्त्री अन्योन्य एकके विना दूसरा नहीं रह सकता ॥ ५६ ॥

नाडीसे ज्ञातव्य विषय।

वातं पित्तं कफं द्वन्द्वं संनिपातं तथैव च।
साध्यासाध्यविवेकं च सर्वं नाडी प्रकाशयेत् ॥ ५७ ॥

वात, पित्त, कफ, द्वंद्वज दोष और सन्निपात एवं साध्यासाध्य, (चकारसे कष्टसाध्य) इनकी सम्पूर्ण विवेचनाको नाडी प्रकाशित करती है ॥ ५७ ॥

इति श्रीमाथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण संकलिते नाडीदर्पणे प्रथमावलोकः ॥ १ ॥

द्वितीयावलोकः।

नाडीज्ञानका समय।

प्रातः कृतसमाचारः कृताचारपरिग्रहम्।
सुखासीनः सुखासीनं परीक्षार्थमुपाचरेत् ॥ १ ॥

अब नाडी देखनेका समय कहते हैं कि, चिकित्सक प्रातःकालमें प्रातःकृत्य-समाप्तिके अनंतर नाडीपरीक्षार्थ रोगीके समीप प्राप्त हो रोगीके प्रातःकृत्यसमाप्तिके पश्चात् उसको सुखपूर्वक बैठाकर इसी प्रकार स्वयं आप सुखपूर्वक बैठकर यथाविधान नाडीपरीक्षा करे। इस जगह प्रातःकालका तो उपलक्षणमात्र है किंतु मध्याह्न और सायंकालमें भी परीक्षा करे। जैसें लिखा है "मध्याह्ने चोष्णतान्विता" इत्यादि ॥ १ ॥

निषिद्धकाल।

सद्यः स्नातस्य भुक्तस्य क्षुत्तृष्णातपसेविनः।
व्यायामाक्रान्तदेहस्य सम्यङ् नाडी न बुध्यते ॥ २ ॥
तैलाभ्यक्ते[1] रतेरन्ते भोजनान्ते तथैव च।
उद्वेगादिषु नाडी च न सम्यगवबुध्यते ॥ ३ ॥

तत्काल स्नान किया हो, तत्काल भोजन किया हो अथवा 'सुप्तस्य' अर्थात् निद्रित क्षुधित, तृषार्त्त, गरमीसे घवडाया हुआ तथा व्यायामद्वारा थकित देह जिसका ऐसे मनुष्यकी नाडी भले प्रकार प्रतीत नहीं होती. उसी प्रकार जिसने तेल लगाया, हो, मैथुनान्तमें, भोजनके अन्तमें, उद्वेग आदि समयमें नाडीकी यथार्थ गति निश्चय नहीं होती अत एवं वैद्य इन समयोंमें नाडीपरीक्षा न करे। किंतु रोगीका चित्त जिस समय स्वस्थ होय तब नाडी देखे परंतु वात मूर्च्छादिक क्षणिक रोगोंमें यह उक्त नियम नहीं है ॥ २ ॥ ३ ॥

नाडी देखने योग्य वैद्य।

स्थिरचित्तः प्रसन्नात्मा मनसा च विशारदः।
स्पृशेदङ्गुलिभिर्नाडीं जानीयाद्दक्षिणे करे ॥ ४ ॥

अब नाडी देखने योग्य वैद्य कहते हैं कि, जो स्थिरचित्त और प्रसन्न आत्मा तथा मनकरके चतुर ऐसा वैद्य तीन उँगालियोंसे दहने हाथकी नाडीको स्पर्श करके उसकी गतिकी परीक्षा करे ॥ ४ ॥

---

१ "तैलाभ्यङ्गे च सुप्ते च तथा च भोजनांतरे।
तथा न ज्ञायते नाडी यथा दुर्गतरा नदी॥" इति पाठान्तरम्।

मूढ वैद्य ।

पीतमद्यश्चञ्चलात्मा मलमूत्रादिवेगयुक् ।
नाडीज्ञानेऽसमर्थः स्याल्लोभाक्रान्तश्च कामुकः ॥ ५ ॥

जिसने मद्य पी रक्खा हो और चञ्चलचित्त, मलमूत्रबाधा लग रही हो, लोभी हो और कामी हो ऐसे वैद्यको नाडी न दिखावे, क्योंकि यह नाडीके जाननेमें असमर्थ है ॥ ५ ॥

नाडी देखनेके योग्य रोगी ।

त्यक्तमूत्रपुरीषस्य सुखासीनस्य रोगिणः ।
अन्तर्जानुकरस्यापि नाडी सम्यक् प्रबुद्ध्यते ॥ ६ ॥

अब नाडी देखनेके योग्य रोगी कहते हैं कि, जो मलमूत्रका परित्याग कर चुका हो और सुखपूर्वक घोटुओंके भीतर हाथको किये सावधानीसे बैठा हो, ऐसे रोगीकी नाडीको वैद्य देखे, क्योंकि ऐसे मनुष्यकी नाडी भली रीतिसे जानी जाती है ॥ ६ ॥

नाडीदर्शनमें अयोग्य ।

धूर्तमार्गस्थविश्वासरहिताज्ञातगोत्रिणाम् ।
विनाभिशंसनं वैद्यो नाडीद्रष्टा च किल्बिषी ॥ ७ ॥

अब कहते हैं ऐसे मनुष्यकी नाडी वैद्य न देखे, कि, जो धूर्त है तथा मार्गमें चलते २ दिखाने लगे और जिनको विश्वास नहीं है तथा जिसकी जात पांति वैद्य नहीं जाने और विना कहे अर्थात् जबतक रोगी अथवा उस रोगीके बांधव न कहें तबतक वैद्य नाडी न देखे, यदि उक्त मनुष्यकी वैद्य नाडी देखे तो पापभागी होता है॥७

नाडी परीक्षाप्रकार ।

सव्येन रोगधृतिकूर्परभागभाजा पीडयाथ दक्षिणकराङ्गुलिकात्रयेण । अङ्गुष्ठमूलमधि पश्चिमभागमध्ये नाडीं प्रभञ्जनगतिं सततं परीक्षेत् ॥ ८ ॥

अब नाडीपरीक्षाका प्रकार लिखते हैं कि, रोगको धारण करनेवाली जो पहुँचेमें नाडी है उसको दहने हाथकी तीन उंगली (तर्जनी, मध्यमा और अनामिका) से दबाकर तथा रोगीके हाथकी कोहनीको दूसरे हाथसे अच्छी रीतिसे पकडकर उसके अंगूठेकी जडके नीचे वातगति नाडिकी वारंवार परीक्षा करे । तात्पर्य यह है कि, प्रथम दहने हाथसे कोहनीको पकडे फिर (वांहसे) वहांसे हाथको हटाय नाडीको दाबे और बाए हाथसे रोगीके हाथको साधकर नाडीकी परीक्षा करे॥८ ॥

इस जगह " दक्षिणकरांगुलिकात्रयेण " यह पद केवल उपलक्षण मात्रको धरा है

किन्तु नाडी, वाम हाथसेभी देखे । यदि ऐसा न मानोगे तो फिर अपनी नाडीका देखना किस प्रकार होगा । और बाजे वैद्य दहने हाथकी नाडी वाम हाथसे और वामहाथकी दहनेसे देखते हैं यह ठीक है ।

कदाचित् कोई शंका करे कि, एक ही हाथकी नाडी देखनेसे रोग जाना जाता है फिर दोनों हाथकी देखना व्यर्थ है । इस लिये कहते हैं कि बहुतसे मनुष्योंके वाम अंगही चेष्टावाले होते हैं अत एव ऐसे मनुष्योंके वाम अंगके जबतक नाडी नहीं देखी जाय तबतक यथार्थ ज्ञान नहीं होता । दूसरे दोषोंके भेदसे नाडीके वाम दक्षिणमें भेद हो जाता है अथवा यह परंपरा है इसीसे लोकविरुद्धभयसे देखते हैं ॥

दूसरा प्रकार ।

ईषद्विनामितकरं विततांगुलीयं बाहुप्रसाररहितं परिपीडनेन ।
ईषद्विनम्रकृतकूर्परवामभागहस्ते प्रसारितसदङ्गुलिसंधिके च ॥ ९ ॥
अङ्गुष्ठमूलपरिपश्चिमभागमध्ये नाडीप्रभञ्जनगतिं प्रथमं परीक्षेत् १०

वैद्य रोगीके हाथको किंचिन्मात्र नवाकर और हाथकी उंगलियोंको एकत्र कर तथा भुजाको बहुत लंबी न होने दे और हाथ पट्टी आदिसे बंधा न हो. क्योंकि, पट्टी आदिके बंधनसे नाडीकी गति रुक जाती है फिर रोगीके कूर्पर (कोहनीके) वामभागको पकड अंगुली और उनकी संधिसहित हाथको पसार रोगीके अंगूठेके पिछले भागमें प्रथम वातकी परीक्षा करे । कारण यह है कि, आदिमें वातका स्थान है अत एव प्रथम वातकी परीक्षा करनी चाहिये ॥ ९ ॥ १० ॥

जीवनाडी ।

प्रदर्शयेद्दोषनिजस्वरूपं व्यस्तं समस्तं युगलीकृतं च ।
मूकस्य मुग्धस्य विमोहितस्य दीपप्रभावा इव जीवनाडी ॥ ११ ॥

यह जीवनाडी गूंगेके, मूढके और मोहित पुरुषके पृथक् २ और मिले तथा द्वंद्वज दोषोंका जो निजस्वरूप है उसको दिखाती है, जैसे दीपक अपने प्रकाशसे घरमें स्थित पदार्थोंको दिखाता है ॥ ११ ॥

स्त्रीणां भिषग्वामहस्ते वामे पादे च यत्नतः ।
शास्त्रेण संप्रदायेन तथा स्वानुभवेन च ॥
परीक्षेद्रत्नवच्चासावभ्यासादेव जायते ॥ १२ ॥

वैद्य स्त्रियोंके वाम हाथ और वाम पैरमें शास्त्रकी संप्रदायसे और अपने अनुभव द्वारा रत्नके समान नाडीपरीक्षा करे । यह परीक्षा केवल अभ्याससाध्य है । तात्पर्य यह है कि, जैसे जौहरी रत्नपरीक्षामें अभ्यास करनेसे रत्नकी परीक्षा करता है उसी

प्रकार इस नाडीका देखना भी रत्नपरीक्षाके समान है, अत एव इसके देखनेमें वैद्य अभ्यास करे ॥ १२ ॥

नाडी देखनेका स्थान ।

करस्याङ्गुष्ठमूले या धमनी जीवसाक्षिणी ।
तच्चेष्टया सुखं दुःखं ज्ञेयं कायस्य पण्डितैः ॥ १३ ॥
'प्रभञ्जनगतिर्यत्र' इति नाड्यन्तरनिरासः । 'सततम्' इति सुस्थदशायामपि परीक्षणीया ॥

तहां नाडी देखनेका स्थान कहते हैं । जैसे कि, हाथके अंगूठेकी जडमें जो जीवसाक्षिणी धमनी नाडी है उसकी चेष्टा करके इस प्राणीके देहका सुख दुःख वैद्यजन जाने । ८ वें श्लोकमें " प्रभञ्जनगतिर्यत्र " इस लिखनेसे यह सूचना करी कि, अंगूठेके संनिकट नाडीको देखनी, अन्य नाडियोंको न देखना, तथा " सततं " इस पदके धरनेसे यह प्रयोजन है कि, वैद्य रोगावस्थाहीमें नाडी न देखे किन्तु स्वस्थ दशामें भी नाडीकी परीक्षा करे. कारण कि, जिसकी नाडी स्वस्थावस्थामें देखी है यादि उसके रोग प्रकट होनेवाल होवे तो उस रोगका निश्चय नाडीद्वारा बहुत सुगमतासे हो सकता है, इसीसे लिखा है यथा ॥ १३ ॥

स्वस्थ प्राणीकी नाडीपरीक्षा ।

भाविरोगावबोधाय सुस्थनाडीपरीक्षणम् ॥ १४ ॥

अर्थात् होनहार रोगज्ञानके अर्थ वैद्यको स्वस्थ (रोगरहित) मनुष्यकी नाथी परीक्षा करनी चाहिये ॥ १४ ॥

स्पर्शनादिभिरभ्यासान्नाडीज्ञो जायते भिषक् ।
तस्मात्परामृशेन्नाडीं सुस्थानामपि देहिनाम् ॥ १५ ॥
स्पर्शनात्पीडनाद्घाताद्वेदनान्मर्दनादपि ।
तासु जीवस्य सञ्चारं प्रयत्नेन निरूपयेत् ॥ १६ ॥

ग्रन्थान्तरोंमें लिखा है कि, नाडीस्पर्शके अभ्याससे अर्थात् प्रत्येककी नाडी देखनेसे वैद्यको नाडीका ज्ञान होता है अतएव यह वैद्य स्वस्थ मनुष्योंकी ही नाडी देखा करे । उस नाडीके स्पर्शसे, पीडने (दाबने) से, घातसे (उंगलियोंमें लगनेसे)

---

१ यद्यस्ति नाडी सर्वत्र शारिरे धातुवाहिनी । तथाप्यगुष्ठमूलस्था करस्था सर्वशोभना ॥ १ ॥
विलसति मणिबन्धे ग्रन्थिरंगुष्ठमूले तदधरनमिताभिर्ह्यंगुलीभिर्निपीड्य ।
स्फुरणमसकृदेषा नाडिकायाः परीक्षा पदमनु घुटिकाधोऽगुष्ठमूल तथैव ॥ २ ॥

वेदन (तडफ) से और मर्दन करना इन कारणोंसे वैद्य उन नाडियोंके जीवसंचा-रका निरूपण करे ॥ १५ ॥ १६ ॥

गुरुकी आवश्यकता ।

गुरुतोऽत्र प्रयत्नेन वैद्येन शुभमिच्छता ।
ज्येष्ठेनाङ्गुष्ठमूलेन नाडीपुच्छं परीक्षयेत् ॥ १७ ॥

यशेच्छु वैद्य यत्नपूर्वक गुरुसे अर्थात् गुरुद्वारा अंगूठेकी जडमें नाडी पुच्छकी परीक्षा करे । तात्पर्यार्थ यह है कि, जो वैद्य अपने हितकी चाहना करे वह गुरु द्वारा नाडी-परीक्षा सीखे स्वयं ही न देखने लगे । ज्येष्ठ कहनेसे अंगूठेका बृहन्निम्नभाग जानना ॥ १७

नाडीं वायुप्रवाहेण शास्त्रं दृष्ट्वा च बुद्धिमान् ।
गुरूपदेशं संस्मृत्य परीक्षेत मुहुर्मुहुः ॥ १८ ॥

बुद्धिमान् वैद्य पवनके संचार करके और शास्त्रके अनुसार तथा गुरुके उपदेशको स्मरण कर बारबार नाडीकी परीक्षा करे ॥ १८ ॥

त्रिवार नाडीपरीक्षा ।

वारत्रयं परीक्षेत धृत्वा धृत्वा विमुच्य च ।
विमृश्य बहुधा बुद्ध्या रोगव्यक्तिं तु निर्दिशेत् ॥ १९ ॥

बारबार नाडीपर अंगुली रखे और हटाय ले अर्थात् नाडीको कुछ दबायके ढीली छोड देवे इस प्रकार करनेसे नाडीकी सबलता और निर्बलता चौडाव लंबाव तथा शीघ्रता और मन्दताका ज्ञान होता है । इस प्रकार तीन वार परीक्षा कर सम्पूर्ण नाडीकी व्यवस्था अपने मनमें विचार कर फिर रोगव्यक्ति कहे अर्थात् इस रोगीके देहमें अमुक रोग है ऐसे विना विचारे न कहे ॥ १९ ॥

तीन अंगुलियोंसे परीक्षा ।

अङ्गुलित्रितयैः स्पृष्ट्वा क्रमाद्दोषत्रयोद्भवैः ।
मन्दां मध्यगतां तीक्ष्णां त्रिभिर्दोषैस्तु लक्षयेत् ॥ २० ॥

नाडीकी तीन उंगलियोंके स्पर्शसे तीनों दोषों करके मन्द, मध्य और तीक्ष्ण गति जाननी अर्थात् प्रथम उंगलीमें मध्यस्पर्श होनेसे वातकी और बीचकी उंगलीमें तीक्ष्ण स्पर्श होनेसे पित्तकी और अंतकी उंगली (अनामिका) में मन्दस्पर्श होनेसे कफकी नाडी जाननी ॥ २० ॥

रोगरहित मनुष्यकी नाडी ।

भूलता भुजगप्राया स्वच्छा स्वास्थ्यमयी शिरा ।
सुखितस्य स्थिरा ज्ञेया तथा बलवती मता ॥ २१ ॥

स्वस्थ अवस्थाकी नाडी केंचुआ और सर्पके समान टेढी गतिसे और पुष्ट तथा जडतारहित होती है। यह नैरोग्य पुरुषकी नाडीके लक्षण है तथा सुखी पुरुषकी नाडी स्थिर और बलवान् होती है ॥ २१ ॥

नाडीके देवता ।

वातनाडी भवेद्ब्रह्मा पित्तनाडी च शङ्करः ।
श्लेष्मनाडी भवेद्विष्णुस्त्रिदेवा नाडिदेवताः ॥ २२ ॥

वातनाडीका ब्रह्मा, पित्तनाडीका शंकर और कफनाडीका पति विष्णु है ॥२२॥

नाडियोंके वर्ण ।

वातनाडी भवेन्नीला पित्तनाडी तु पाण्डुरा ।
श्वेता तु कफनाडी स्यादेवं वर्णानि संवदेत् ॥ २३ ॥

वातकी नाडीका वर्ण नील है, पित्तकी नाडीका पीला, कफनाडीका श्वेत इस प्रकार नाडीके वर्ण कहने चाहिये ॥ २३ ॥

नाडियोंका स्पर्श ।

पित्तनाडी भवेदुष्णा कफनाडी तु शीतला ।
वातनाडी भवेन्मध्या एवं स्पर्शविनिर्णयः ॥ २४ ॥

पित्तकी नाडी स्पर्श करनेसे गरम प्रतीत होती है, कफकी नाडी शीतल और वातकी नाडीका स्पर्श मध्यम होता है इस प्रकार नाडीका स्पर्श जानना ॥ २४ ॥

कालपरत्वसे नाडीकी गति ।

प्रातः स्निग्धमयी नाडी मध्याह्ने चोष्णतान्विता ।
सायाह्ने धावमाना च रात्रौ वेगविवर्जिता[1] ॥ २५ ॥

स्वभावसे ही नाडी प्रातःकालमें स्निग्ध, मध्याह्नमें उष्ण और सायंकालमें वेगवती तथा रात्रिमें वेगवर्जित होती है ॥ २५ ॥

अथ वातादिस्वभावक्रम ।

आदौ च वहते वातो मध्ये पित्तं तथैव च ।
अन्ते च वहते श्लेष्मा नाडिकात्रयलक्षणम् ॥ २६ ॥

अब वातादिकका स्वभावक्रम कहते हैं—जिस समय वैद्य कोहनीको पकड़ता है उसके द्वितीय क्षणमें प्रथम वातकी नाडी, फिर मध्यमें पित्तकी और अंतमें कफकी नाडी चलती है। यह द्वितीयादि क्षणोंमें जाननी। कोई कहता है कि, आदिमें वातकी,

---

१ 'चिराद्रोगविवर्जिता" इति पाठान्तरम् ।

बीचमें पित्तकी और अंतमें कफकी नाडी चलती है । यह बात सर्वथा निर्मूल है क्योंकि स्थानका नियम किसी जगह नहीं कहा, विशेष आगे कहते हैं ॥ २६ ॥

उक्त श्लोकका विरोधीवचन ।

आदौ च वहते पित्तं मध्ये श्लेष्मा तथैव च ।
अन्ते प्रभञ्जनो ज्ञेयः सर्वशास्त्रविशारदैः ॥ २७ ॥

आदिमें पित्तकी, मध्यमें कफकी और अन्तमें वातकी नाडी सर्वशास्त्रज्ञाता वैद्यों-करके जाननी ॥ २७ ॥

नाडीके नाम	वात	पित्त	कफ
नाडीके वर्ण	श्याम	पीत लाल नील	सफेद
नाडीके देवता	ब्रह्मा	शिव	विष्णु
नाडीका स्पर्श	न गरम न शीतल किंतु मध्यम	गरम	शीतल
नाडीका माप	विषम	दीर्घ	ह्रस्व
नाडीका गंध	गंधहीन	तीव्रगंध	मध्यमगंध
नाडीका गमन	तिर्यग्गमन	ऊर्ध्वगमन	अधोगमन
ना० गुरुता लघुता	हलकी	हलकी	भारी
ना० बलवान् समय	रात्रिदिवाबली	दिवाबली	रात्रिबली

उक्त श्लोकका पुष्टिकर्ता दृष्टान्त ।

तृणं पुरःसरं कृत्वा यथा वातो वहेद्बली ।
शेषस्थं च तृणं गृह्य पृथिव्यां वक्रगो यथा ॥ २८ ॥
एवं मध्यगतो वायुः कृत्वा पित्तं पुरःसरम् ।
स्वानुगं कफमादाय नाड्यां वहति सर्वदा ॥ २९ ॥

इस वाक्यको दृष्टान्त देकर पुष्ट करते हैं कि, जैसे प्रबल वात अर्थात् आंधी तिनका-ओंको अगाडी करके और कुछ पिछाडीके तिनकाओंको लेकर आप बीचमें टेढी होकर चलती है इसी प्रकार मध्यगत वायु पित्तको अगाडी कर और अपने पिछाडी कफको करके बीचमें आप टेढी होकर चलती है ॥ २८ ॥ २९ ॥

अतएव च पित्तस्य ज्ञायते कुटिला गतिः ।
वक्रा प्रभञ्जनस्यापि प्रोक्ता मन्दा कफस्य च ॥ ३० ॥
पित्ताग्रेऽस्ति गतिः शीघ्रा तृणस्येति विदृश्यताम् ।
मन्दानुगस्य वक्रा वै मारुतो मध्यगस्य वै ॥ ३१ ॥
तथात्रैव च ज्ञातव्या गतिर्दोषत्रिकोद्भवा ।
नान्यथा ज्ञायते स्नायुगतिरेताद्विनिश्चितम् ॥ ३२ ॥

इसीसे नाडीमें पित्तकी गति कुटिल है और वातकी गति टेढी एवं कफकी मन्द गति प्रतीत होती है । पित्तकी शीघ्रगति सो आंधीमें तृणके देखनेसे प्रत्यक्ष होती है और जैसे आंधीमें पिछाडीके तृणकी मन्दगति होती है उसी प्रकार नाडीमें पिछाडी कफकी मन्दगति है और जैसे आंधीके बीचमें पवनकी गति टेढी तिरछी होती है उसी प्रकार इस नाडीके बीचमें वातकी गति टेढी तिरछी प्रतीत होती है इसी प्रकारसे नाडीकी गति प्रतीत होती है । अन्य प्रकारसे नहीं ॥ ३०-३२ ॥

परंतु हमको शंका है कि, नाडीका और आंधीका क्या सम्बन्ध है, क्योंकि, आंधीमें आगे पीछे और बीचमें पवन ही कहाती है । परंतु नाडीमें न्यारे २ दोष हैं । जैसे वात, पित्त तथा कफ और पवनका एक ही कर्म है परंतु इन तीनों दोषोंके कर्म पृथक् पृथक् हैं इस कारण यह दृष्टांत ही असंभव है, हमारे मनको हरणकर्त्ता नहीं है ॥

ग्रन्थकर्त्ताका मत ।

इदानी कथयिष्यामि स्वमतं शास्त्रसंमतम् ।
मिथ्यारोपितवादस्य खण्डनं लोकरञ्जनम् ॥ ३३ ॥
वातमग्रे वदन्त्येके पित्तमग्रे च केचन ।
हास्यास्पदमिदं सर्वं न तु सत्यं मनागपि ॥ ३४ ॥

अब हम शास्त्रसंमत तथा मनुष्योंकी रंजना (प्रसन्नता) को और मिथ्यारोपित वादका खण्डनरूप अपने मतको कहते हैं । जैसे कोई तो वातकी और कोई पित्तकी नाडीको आगे बतलाता है, यह केवल उनके हास्यका स्थान है किन्तु किंचिन्मात्र भी सत्य नहीं है इस प्रकार माननेसे बडा भारी अनर्थ होता है जैसे आगे लिखते हैं ॥

सति पित्तभवे व्याधौ बुद्ध्यतिक्रमतो यदि ।
वातकोपवशादेवमादौ ज्ञात्वा धरागतिम् ॥ ३५ ॥
प्रदद्भेषजं ह्युष्णं तद्दोषविनिवृत्तये ।
तदा नूनं भवेन्मृत्युः पित्तकोपेन भूयसा ॥ ३६ ॥

कदाचित् किसी रोगीके पित्तकी व्याधि होवे और बुद्धि भ्रमसे वातकोपकी नाडी अग्रभागमें समझकर उस रोगीको दोष दूर करनेको उसे उष्ण (शुंठयादि) औषध देय तो कहो एक तो पित्तदोषकी गरमी और दूसरी गरमही औषध । अब कहो वह रोगी पित्तकी गरमीके मारे मरेगा कि, बचेगा ? किन्तु अवश्य ही मरेगा॥३५॥३६॥

सति वातभवे व्याधौ बुद्ध्यतिक्रमतो यदि ।
नाडीगतिं पित्तवशादादौ ज्ञात्वा ततो भिषक् ॥ ३७ ॥
प्रदद्देद्भेषजं शीतं तद्दोषविनिवृत्तये ।
तदा नूनं भवेन्मृत्युर्वातकोपेन भूयसा ॥ ३८ ॥

इसी प्रकार रोगीके देहमें वातजन्य रोग होय और वैद्य बुद्धिके भ्रमसे पित्तकी नाडी जानकर यदि उस रोगीको पित्तनाशक शीतल उपचार करे तो कहो अत्यन्त सरद औषधसे रोगी सरदीके मारे मरेगा या बचेगा ? किंतु अवश्य ही मरेगा ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

अत्याश्चर्यमिदं लोके वर्तते दृश्यतां यथा ।
वदन्त्येके दिनं रात्रिं केऽपि रात्रिं दिनं तथा ॥ ३९ ॥
एवं स्वेच्छाभिलापेन स्वल्पलाभेन मानवाः ।
रोगिणां सुप्रियान् प्राणान्हरन्ति ज्ञानवर्जिताः ॥ ४० ॥

इस संसारमें अत्यन्त आश्चर्य है देखो कोई दिनको रात्रि और कोई रात्रिका दिन कहता है। इस प्रकार अपनी अपनी इच्छानुसार बकते हैं और ये मूर्ख वैद्य थोडेसे लोभके कारण रोगियोंके परम प्रिय प्राणोंको हरण करते हैं। कहो इनसे बढकर कौन पामर है जो विना विचारे अनर्थ करते हैं। भाई ! यह वैद्यविद्या खेल नहीं है ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अतएव मया चित्ते सर्वमानीय तत्त्वतः । कथ्यते नास्ति नास्तीह नाडीस्थानविचारणा ॥ ४१ ॥ किन्तु नाडीगतिः श्रेष्ठा शास्त्रकारैः प्रकीर्तिता । नच तत्र हि सन्देहो लेशमात्रोऽपि विद्यते ॥ ४२ ॥ तत्प्रकारोऽप्ययं ज्ञेयः सावधानतया किल । यथा सर्पजलौकादिगतिर्वातस्य गद्यते ॥४३॥ न तत्र कुरुते कोऽपि पित्तश्लेष्मभवं भ्रमम् । कुलिङ्गकाकमण्डूकगतिः पित्तस्य कीर्त्यते ॥ ४४ ॥ न तत्र कोऽपि कुरुते वातश्लेष्मभवं भ्रमम् । कपोतानां मयूराणां हंसकुक्कुटयो-

रपि ॥ ४५ ॥ या गतिः सा च विज्ञेया कफस्यैव गतिर्नृभिः ।
न तत्र कोऽपि कुरुते वातपित्तभवं भ्रमम् ॥ ४६ ॥

इन ऊपर कहे हुए सर्व कारणोंको अपने चित्तमें भले प्रकार विचार कर हम कहते हैं कि, नाडीके जो आदि मध्य और अंत्य ये स्थान किसीने कहे हैं सो नहीं हैं नही हैं। तो क्या है ? इसलिये कहते हैं कि, नाडीकी जो गति है वह सत्य है क्योंकि इसमें सर्व ग्रन्थकर्ताओंकी संमति है और इसमें लेशमात्रभी संदेह नहीं है उस प्रकारको तुम सावधानता करके सुनो । जैसे सर्प और जोंककी गति वातकी है इसमें कोई भ्रम नहीं करे कि यह पित्तकी नाडी है या कफकी, उसी प्रकार कुलिंग, काक और मंडूककी गति पित्तकी है । इसमें वात तथा कफकी नाडीका कोई भ्रम नहीं करता, इसी प्रकार कपोत, मोर, हंस और कुक्कुट इनकी जो गति है वह कफकी है इसमें कोई यह नहीं कहे कि, यह गति कफकी नहीं है वातपित्तकी है, इसीसे हमारा तो यही सिद्धांत है कि नाडीके स्थान असत्य और गति सत्य है ॥ ४१–४६ ॥

वातादिकोंकी क्रमसे गति ।

वाताद्वक्रगता नाडी चपला पित्तवाहिनी ।
स्थिरा श्लेष्मवती ज्ञेया मिश्रिते मिश्रिता भवेत् ॥ ४७ ॥

वात तिरछी वहती है अत एव वातकी नाडी टेढी चलती है, अग्नि चंचल है ऊपरको जाती है अत एव पित्तकी नाडी ऊपरकी तरफ वहती है और चपल है, जल नीचेको जाता है इसीसे प्रबल नहीं है अतएव कफकी नाडी भी स्थिर है और जो मिश्रित नाडी है उनकी गतिभी मिली हुई होती है। इससे यह दिखाया कि द्विदोषजमें दो दोषके चिह्न होते हैं, त्रिदोषजमें तीनो दोषोंके चिह्न होते हैं। कदाचित् कोई प्रश्न करे कि एक ही नाडी चपल और स्थिर कैसे हो सकती है ? इससे कहते हैं कि समयभेद होनेसे दोनों गति हो सकती हैं ॥ ४७ ॥

वातादिकी विशेषगति ।

सर्पजलौकादिगतिं वदंति विबुधाः प्रभञ्जने नाडीम् ।
पित्ते च काकलावकभेकादिगतिं विदुः सुधियः ॥ ४८ ॥
राजहंसमयूराणां पारावतकपोतयोः ।
कुक्कुटादिगतिं धत्ते धमनी कफसंवृता ॥ ४९ ॥

सर्प और जोंककी गति पण्डितजन वातकी नाडीकी गति कहते हैं अर्थात् जैसे सर्प और जोंक टेढे, तिरछे होकर चलते हैं उसी प्रकार बादीकी नाडी चलती है। आदिशब्दसे बिच्छूकी गतिका ग्रहण है। उसी प्रकार पित्तमें काक (कौआ

लावक (लवा) और भेक (मेंडक) की गतिके सदृश नाडी चलती है अर्थात् जैसे कौआ, लवा और मेंडक फुदकते उछलते चलते हैं, उसी प्रकार पित्तकी नाडी चलती है। आदिशब्दसे कुलिंग और चिडा आदिकी गतिका ग्रहण है। एवं राजहंस (बत्तक), मोर, कबूतर, कपोत (पिंडुकिया) और मुरगा इन पक्षियोंकीसी अर्थात् ये पक्षी जैसे मन्द २ गति चलते हैं इस प्रकार कफकी नाडी चलती है आदिशब्दसे हाथी और उत्तम स्त्रीकी चालका ग्रहण है अर्थात् जैसे हाथी और उत्तम स्त्री झूमती हुई मन्द २ चलती हैं उसी प्रकार कफकी नाडी चलती है ॥ ४८॥४९॥

द्वंद्वजनाडीकी चाल।

मुहुः सर्पगतिं नाडीं मुहुर्भेकगतिं तथा।
वातपित्तद्वयोद्भूतां प्रवदन्ति विचक्षणाः ॥ ५० ॥
भुजगादिगतिं चैव राजहंसगतिं धराम्।
वातश्लेष्मसमुद्भूतां भाषन्ते तद्विदो जनाः ॥ ५१ ॥
मण्डूकादिगतिं नाडीं मयूरादिगतिं तथा।
पित्तश्लेष्मसमुद्भूतां प्रवदन्ति महाधियः ॥ ५२ ॥

वारवार सर्पगति (टेढी) और वारवार मेंडककी गति (उछलती) नाडी चले उसको चतुर वैद्य वातपित्तकी नाडी कहते हैं। तथा कभी सर्पगति और कभी राजहंसकी गतिसे नाडी चले उसको पण्डितजन वातकफकी नाडी कहते हैं। एवं कभी मेंडक और कभी मोरकी चाल चले उस नाडीको पित्तकफकी नाडी बुद्धिमान् वैद्य कहते हैं ॥ ५०–५२ ॥

प्रकारान्तर।

वातेऽधिके भवेन्नाडी प्रव्यक्ता तर्जनीतले।
पित्ते व्यक्ता मध्यमायां तृतीयाङ्गुलिगा कफे ॥ ५३ ॥
तर्जनीमध्यमामध्ये वातपित्ताधिके स्फुटा।
अनामिकायां तर्जन्यां व्यक्ता वातकफे भवेत् ॥ ५४ ॥
मध्यमानामिकामध्ये स्फुटा पित्तकफेऽधिके।
अङ्गुलीत्रितयेऽपि स्यात्प्रव्यक्ता सन्निपाततः ॥ ५५ ॥

वाताधिक्य नाडी तर्जनीके नीचे चलती है। पित्तकी नाडी मध्यमा उंगलीके नीचे और कफकी नाडी तीसरी उंगली अर्थात् अनामिकाके नीचे चलती है। वातपित्तकी

नाडी तर्जनी और मध्यमाके नीचे चलती है। वातकफकी नाडी अनामिका और तर्जनीके नीचे चलती है। मध्यमा और अनामिकाके नीचे पित्त कफाधिक नाडी चलती है और तीनों उंगलियोंके नीचे सन्निपातकी नाडी गमन करती है ॥५३–५५॥

वक्रमुत्प्लुत्य चलति धमनी वातपित्ततः।
वहेद्वक्रं च मन्दं च वातश्लेष्माधिकं त्वचः॥
उत्प्लुत्य मन्दं चलति नाडी पित्तकफेऽधिके॥ ५६ ॥

वातापित्ताधिक्यसे नाडी टेढी और उछलती हुई चलती है। वातकफसे टेढी और मन्द गमन करती है, पित्तकफाधिक्यमें नाडी उछलती हुई मन्द गमन करती है॥५६॥

त्रिदोषकी नाडी।

उरगादिलावकादिहंसादीनां च बिभ्रती गमनम्।
वातादीनां च समं धमनी सम्बन्धमाधत्ते॥ ५७॥

वातादि त्रिदोषके समान होनेसे नाडी सर्प, लवा और हंस आदि पक्षियोंके समान गमन करती है। समके कहनेसे न्यूनाधिक्यका त्याग है। यदि नाडी तीनों दोषोंके क्रमसे चले तो असाध्य नहीं है॥ ५७॥

लावतित्तिरवार्तीकगमनं सन्निपाततः॥ ५८॥
कदाचिन्मन्दगमना कदाचिच्छीघ्रगा भवेत्।
त्रिदोषप्रभवे रोगे विज्ञेया हि भिषग्वरैः॥ ५९॥

लवा, तीतर, बटेरकी चाल नाडी सन्निपातके कोपसे करती है। कभी मन्द गमन करे और कभी शीघ्र गमन करे, ऐसी नाडी त्रिदोषजन्य रोगमें वैद्योंको जाननी चाहिये। इस त्रिदोषमें पित्तको क्रमसे साध्यासाध्य और कृच्छ्रसाध्य जानना अर्थात् अधिक पित्तसे साध्य, मध्यसे कष्टसाध्य और पित्त सर्वथा नाडीमें न होय तो वह रोगी असाध्य है॥ ५८॥ ५९॥

सामान्यतापूर्वक सुखसाध्यत्व।

यदा यं धातुमाप्नोति तदा नाडी तथा गतिः।
तथा हि सुखसाध्यत्वं नाडीज्ञानेन बुध्यते॥ ६०॥

नाड़ी जिस समय जिस धातुमें प्राप्त हो उस समय यदि उसका प्रकृति अनुसार चलना होय तो पीडा सुखसाध्य ऐसे नाडी ज्ञान करके जानी जाती है। इसका निष्कृष्टार्थ यह है कि, अपराह्णादि कालमें वातोल्बणा नाडी प्रथम वातकी

गति करके चले, फिर क्रमसे पित्त और कफकी चाल चले, किन्तु पित्तोल्वण वात-गतिसे न चले तौ सुखसाध्य जाननी । यदि इससे विपरीत हो तो विपरीत अर्थात् असाध्य जाननी । जैसे किसीने कहा है-" नाडी यथा कालगतिस्त्रयाणां प्रकोपशान्त्या-दिभिरेव भूयः " ॥ ६० ॥

असाध्यत्व ।

मन्दं मन्दं शिथिलशिथिलं व्याकुलं व्याकुलं वा
स्थित्वा स्थित्वा वहति धमनी याति नाशं च सूक्ष्मा ।
नित्यं स्थानात्स्खलति पुनरप्यङ्गुलिं संस्पृशेद्वा
भावैरेवं बहुविधविधैः सन्निपातादसाध्या ॥ ६१ ॥

जो नाडी कभी प्रखरतारहित मन्द मन्द गमन करे, कभी स्खलित भावसे, कभी व्याकुल व्याकुलवत् (जैसे त्रासित मनुष्य चलता है) कभी ठहर ठहरके चले और जो संपूर्ण रूपसे लुप्त हो जाय अथवा बहुत सूक्ष्म वहे अर्थात् यह प्रतीत न होय कि, यह नाडी चलै है या नहीं चले और जो नित्य स्थान अर्थात् अंगुष्ठमूलको परि-त्याग कर दे, इसी प्रकार कुछ कालमें फिर अपने स्थानमें प्रगट हो उंगलियोंके आघात करे, ऐसे अनेक प्रकारके भावों करके नाडीको मृत्युकी कारण जाननी॥ ६१॥

महादाहेऽपि शीतत्वं शीतत्वे तापिता शिरा ।
नानाविधा गतिर्यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ६२ ॥

जिस प्राणीके देहमें अत्यन्त ताप होय परन्तु नाडी शीतल हो, एवं देह अत्यन्त शीतल हो और नाडी उष्ण प्रतीत होय तथा जिस नाडीकी अनेक प्रकारकी गति होय उस रोगीकी निश्चय मृत्यु होय । इस श्लोकमें ' महाशब्द ' पित्तकृत दाहके निवारणार्थ है ॥ ६२ ॥

त्रिदोषे स्पन्दते नाडी मृत्युकालेऽपि निश्चला ॥ ६३ ॥

सन्निपातावस्थामें मृत्युकालमें नाडी सामान्य भावसे चलती है. क्योंकि, अती-सारादि रोगोंमें हाथ पैरमें स्वेदादि करनेसे नाडीका तडफना प्रतीत होता है ॥ ६३ ॥

पूर्वं पित्तगतिं प्रभञ्जनगतिं श्लेष्माणमाबिभ्रतीं
स्वस्थानभ्रमणं मुहुर्विदधतीं चक्राधिरूढामिव ।

तीव्रत्वं दधतीं कलापिगतिकां सूक्ष्मत्वमातन्वतीं
नो साध्यां धमनीं वदन्ति सुधियो नाडीगतिज्ञानिनः ॥६४॥

प्रथम पित्तगतिसे चले अर्थात् प्रथम वातगति चलना चाहिये सो त्याग दे यह विपरीत क्रम दिखाया, फिर वातगति और फिर कफकी गतिसे चले तथा अपने स्थानको छोड वारंवार अनेक प्रकारसे चक्र (चाक) पर बैठे चाकफेरीके सदृश भ्रमण करे, कभी तीव्र वेगसे चले और कभी मोरकी गतिके समान उत्तरोत्तर मन्द पडजावे ऐसी नाडीको नाडीकेज्ञाता साध्य नहीं कहते किन्तु असाध्य कहते हैं॥६४॥

यात्युच्चा च स्थिरात्यन्ता या चेयं मांसवाहिनी ।
या च सूक्ष्मा च वक्रा च तामसाध्यां विदुर्बुधाः ॥ ६५ ॥

जो नाडी अत्यन्त ऊंची, अत्यन्त स्थिर और जो मांसवाहिनी कहिये मांसाहार करनेसे जैसी चले ऐसी चलने लगे और जो अत्यन्त सूक्ष्म और टेढी हो उसको वैद्यजन असाध्य कहते हैं ॥ ६५ ॥

असाध्यनाडीका परिहार ।

भारप्रवाहमूर्च्छाभयशोकप्रमुखकारणान्नाडी ।
संमूर्च्छितापि गाढं पुनरपि सा जीवनं धत्ते ॥ ६६ ॥

अत्यन्त बोझके उठानेसे अथवा विषवेग धाराके वहनसे, रुधिर देखनेके कारण जो मूर्च्छित होगया हो, राक्षसादि दर्शन करके भयभीततासे,धनपुत्रादि नष्ट होनेके शोकसे जो नाडी अत्यन्त स्पंदरहित भी हो वह फिर भी साध्यताको प्राप्त होती है। कोई ' भावप्रवाह ' ऐसा पाठ मानता है सो असत् है ॥ ६६ ॥

पतितः सन्धितो भेदी नष्टशुक्रश्च यो नरः ।
शाम्यते विस्मयस्तस्य न किञ्चिन्मृत्युकारणम् ॥ ६७ ॥

जो उच्चस्थानादिसे गिरा हो, हड्डी आदिके जोडनेसे, अतिसार रोगवाला, जिसके यक्ष्मा आदि रोगके कारण अथवा रमण करनेके कारण शुक्र क्षीण हो गया हो, ऐसे मनुष्योंकी यदि नाडी अत्यन्त क्षीण भी होगई हो तथापि मृत्युका कारण नहीं असाध्यके विस्मयको दूर करे है ॥ ६७ ॥

तथा भूताभिषङ्गेऽपि त्रिदोषवदुपस्थिता ।
समाङ्गा वहते नाडी तथा च न क्रमं गता ।
अपमृत्युर्न रोगाङ्गा नाडी तत्सन्निपातवत् ॥ ६८ ॥

---

१ ' भीमत्वं दधतीं कदाचिदपि वा ' इति पाठान्तरम् ।

एवं भूताभिषंग अर्थात् भूतप्रेतबाधामें यदि नाडी सन्निपातके सदृश चले तथा वह नाडी वातपित्तकफस्वभावक्रमवाली हो किंतु वे क्रम न होय तो उस सन्निपातके सदृश नाडीसे भी मृत्युका भय नहीं है ॥ ६८ ॥

स्वस्थानहीने शोके च हिमाक्रान्ते च निर्गदाः ।
भवन्ति निश्चला नाड्यो न किञ्चित्तत्र दूषणम् ॥ ६९ ॥

उच्चस्थानोंसे गिरनेसे शोक और हिम (बर्फ कोहल आदिकी शरदी) से यदि नाडी निश्चल हो फिर भी प्रगट होय इससे मृत्युशंकाका भय नहीं है, इस श्लोकमें निर्गदा जो पद है सो असंगत है । क्योंकि, निर्गदा नाडी भी निश्चला होती है ॥ ६९ ॥

स्तोकं वातकफं जुष्टं पित्तं वहति दारुणम् ।
पित्तस्थानं विजानीयाद्भेषजं तस्य कारयेत् ॥ ७० ॥

किंचिन्मात्र वातकफयुक्त और पित्त जिसमें प्रबल हो तो उस रोगीका यत्न करना चाहिये, असाध्य नहीं है ॥ ७० ॥

स्वस्थानच्यवनं यावद्धमन्या नोपजायते ।
तावच्चिकित्सासत्त्वेऽपि नासाध्यत्वमिति स्थितिः ॥ ७१ ॥

जबतक नाडी स्वस्थान कहिये अंगुष्ठमूलसे च्युत न होय तावत्कालतक चिकित्सा करे यह असाध्य नहीं है ॥ ७१ ॥

नाडीकी गतिसे अरिष्टकाल ज्ञान ।

भूलता भुजगाकारा नाडी देहस्य संक्रमात् ।
विशीर्णा क्षीणतां याति मासान्ते मरणं भवेत् ॥ ७२ ॥

कभी नाडी केंचुएके सदृश कृश और टेढी चले, कभी सर्पके समान पुष्ट बलयुक्त और तिरछी चले तथा कभी अलक्ष और अति कृशतापूर्व गमन करे एवं कभी देह सूजन आदिसे स्थूल हो जावे और कभी कृश हो जाय तो वह रोगी दूसरे महीनेमें मरे ॥ ७२ ॥

क्षणाद्गच्छति वेगेन शान्ततां लभते क्षणात् ।
सप्ताहान्मरणं तस्य यद्यङ्गे शोथवर्जितः ॥ ७३ ॥

कभी नाडी जलदी चले, कभी चलनेसे रह जावे और देहमें शोथ नहीं हो तो उस प्राणीकी सात दिनमें मृत्यु होय ॥ ७३ ॥

---

१ तत्स्थचिह्नस्य सत्त्वेऽपिति पाठान्तरम् ।

निरीक्ष्या दक्षिणे पादे तदा चैषा विशेषतः ।
मुखे नाडी वहेन्नित्यं ततस्तु दिनतुर्यकम् ॥ ७४ ॥

पुरुषके दहने पैरमें और स्त्रीके वाम पैरमें यदि नाडी विशेष संचार करे तथा आदिमें नित्य नाडी चले तो वह रोगी चार दिन जीवे । आदि शब्दसे इस जगह तर्जनी उंगली जाननी ॥ ७४ ॥

हिमवद्विशदा नाडी ज्वरदाहेन तापिनाम् ।
त्रिदोषस्पर्शभजतां तदा मृत्युर्दिनत्रयात् ॥ ७५ ॥

सन्निपातज्वर दाहसे संतप्त रोगीकी नाडी यदि शीतल और निर्मल हो तो वह रोगी तीन दिनमें मरे ॥ ७५ ॥

गतिं तु भ्रमरस्येव वहेदेकदिनेन तु ।
मरणे डमरूरूपा भवेदेकदिनेन तु ॥ ७६ ॥

जिस प्राणीकी नाडी भ्रमरके सदृश गमन करे अर्थात् जैसे भौंरा कुछ दूर उंड-कर चला जाता है और फिर उसी जगह आजाता है इस प्रकार नाडी चलनेसे उसकी एक दिनमें मृत्यु होय । मरणमें नाडी डमरूके आकार होती है, वह एक दिनमें मरे ॥ ७६ ॥

असाध्य रोगी ।

दृश्यते चरणे नाडी करे नैवाधिदृश्यते ।
मुखं विकसितं यस्य तं दूरात्परिवर्जयेत् ॥ ७७ ॥

जिसके चरणमें नाडी प्रतीत होय और हाथमें न मालूम हो, तथा जिसका मुख खुल गया हो उसे वैद्य त्याग दे ॥ ७७ ॥

वातपित्तकफाश्चापि त्रयो यस्यां समाश्रिताः ।
कृच्छ्रसाध्यामसाध्यां वा प्राहुर्वैद्यविशारदाः ॥ ७८ ॥

जिसकी नाडीमें वात, पित्त और कफ ये तीनों दोष हों, उस नाडीको बुद्धिमान् वैद्य कृच्छ्रसाध्य अथवा असाध्य कहते हैं ॥ ७८ ॥

शीघ्रा नाडी मलोपेता शीतला वाथ दृश्यते ।
द्वितीयदिवसे मृत्युर्नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥ ७९ ॥

जिस रोगीकी नाडी बहुधा मलदूषित होकर शीघ्र चले किंवा शीतल प्रतीत हो उस रोगीकी दूसरे दिन मृत्यु हो, इस प्रकार नाडीज्ञानपारंगत वैद्योंने कहा है ॥ ७९ ॥

मुखे नाडी वहेत्तीव्रा कदाचिच्छीतला वहेत्।
आयाति पिच्छिलस्वेदः सप्तरात्रं न जीवति ॥ ८० ॥

वातनाडी तीव्रगति तथा कभी मन्द वहे तथा अंगमेंसे गाढा पसीना निकले तो वह रोगी सात रात्रि नहीं बचे ॥ ८० ॥

देहे शैत्यं मुखे श्वासो नाडी तीव्रा विदाहिनी।
मासार्धं जीवितं तस्य नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥ ८१ ॥

शरीरमें शीतलता, मुखसे अत्यन्त श्वास छोडे तथा नाडी तीव्रदाहयुक्त चले उसका अर्धमास आयुष्य है ऐसा नाडीज्ञाताओंने कहा है ॥ ८१ ॥

मुखे नाडी यदा नास्ति मध्ये शैत्यं बहिः क्लमः।
यदा मन्दा वहेन्नाडी त्रिरात्रं नैव जीवति ॥ ८२ ॥

जिस कालमें वातनाडी नहीं चले, अन्तर्गत शैत्य हो तथा बाहर ग्लानि होकर मन्द मन्द नाडी चले तो वह रोगी तीन रात्रि नहीं जीवे ॥ ८२ ॥

नाडीद्वारा असाध्य लक्षण।

अतिसूक्ष्मातिवेगा च शीतला च भवेद्यदि।
तदा वैद्यो विजानीयात्स रोगी त्वायुषः क्षयी ॥ ८३ ॥

जिस कालमें नाडी अति सूक्ष्म किंवा अति वेगवान् और शीतल वहे तो रोगी क्षीणायु है ऐसा वैद्य जाने ॥ ८३ ॥

विद्युद्वद्रोगिणां नाडी दृश्यते न च दृश्यते।
अकालविद्युत्पातेव स गच्छेद्यमसादनम् ॥ ८४ ॥

जिस रोगीकी नाडी कभी कभी बिजलीके समान फडक जावे और फिर अस्त हो जावे, वह नाडी अकस्मात् जैसे बिजली गिरती है, इस प्रकार यमराजके घर जाय ८४

तिर्यगुष्णा च या नाडी सर्वगा वेगवत्तरा।
कफपूरितकण्ठस्य जीवितं तस्य दुर्लभम् ॥ ८५ ॥

नाडी उष्ण वक्रगति तथा सर्पके समान बहुत वेगवान् हो तथा कण्ठ कफसे घिर जावे ऐसे रोगीका जीवन दुर्लभ जानना ॥ ८५ ॥

चला चलितवेगा च नासिकाधारसंयुता।
शीतला दृश्यते या च याममध्ये च मृत्युदा ॥ ८६ ॥

जिसकी नाडी कांपनेवाली तथा चञ्चल नासिकाके श्वासोच्छ्वासके आधारसे चलने-वाली और शीतल ऐसी प्रतीत हो वह रोगी एक प्रहरमें मरे ऐसा जानना ॥ ८६ ॥

शीघ्रा नाडी मलोपेता मध्याह्नेऽग्निसमो ज्वरः ।
दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीयेऽह्नि म्रियेत सः ॥ ८७ ॥

जिस रोगीकी त्रिदोषयुक्त नाडी बहुत जल्दी चले तथा जिसको मध्याह्नमें अग्निके समान ज्वर आवे, उस रोगीकी आयु एक दिनकी है दूसरे दिन मृत्यु होय ॥ ८७ ॥

कन्दे न स्पन्दते नित्यं पुनर्लगति नाड्गुलौ ।
मध्ये द्वादशयामानां मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ ८८ ॥

जो नाडी अपने मूलस्थानमें फडके नहीं और उंगलियोंका स्पर्श न करे, उसकी बारह प्रहरमें मृत्यु होय ऐसा जानना ॥ ८८ ॥

स्थित्वा नाडी मुखे यस्य विद्युज्ज्योतिरिवेक्षते ।
दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीये म्रियेत ध्रुवम् ॥ ८९ ॥

जिस रोगीकी नाडी मूलस्थानसे अग्रभागमें ठहरकर बिजलीके सदृश तडफ जावे, वह एक दिन जीवे दूसरे दिन निश्चय मरे ॥ ८९ ॥

ज्वालावधि जीवन ज्ञान ।

स्वस्थानविच्युता नाडी यदा वहति वा न वा ।
ज्वाला च हृदये तीव्रा तदा ज्वालावधि स्थितिः ॥ ९० ॥

जिस रोगीकी नाडी अपने स्थानसे विच्युत (छूट) होकर कभी चले कभी नहीं और हृदयमें तीव्र दाह होय तो जबतक हृदयमें ज्वाला है तावत्काल रोगीका जीवन है ॥ ९० ॥

अङ्गुष्ठमूलतो बाह्ये द्व्यङ्गुले यदि नाडिका ।
प्रहरार्द्धाद्बहिर्मृत्युं जानीयाच्च विचक्षणः ॥ ९१ ॥

अंगुष्ठमूल अर्थात् तर्जनी उंगली धरनेके स्थलमें यदि नाडीकी गति प्रतीत न हो, केवल मध्यमा और अनामिका इन दो अंगुलियोंसे प्रतीत होय तो उस रोगीका अर्ध प्रहरके उपरान्त मृत्यु होय ॥ ९१ ॥

सार्द्धद्वयाङ्गुलाद्बाह्ये यदि तिष्ठति नाडिका ।
प्रहरैकाद्बहिर्मृत्युं जानीयाच्चेद्विचक्षणः ॥ ९२ ॥

नाडी मूलस्थानसे २॥ अंगुल अन्तर अर्थात् यदि केवल अनामिकाके शेषार्ध मात्रमें फडके उसकी प्रहर उपरान्त अर्थात् दूसरे प्रहरमें मृत्यु होय ॥ ९२ ॥

पादाङ्गुलगता नाडी चञ्चला यदि गच्छति ।
त्रिभिस्तु दिवसैस्तस्य मृत्युरेव न संशयः ॥ ९३ ॥

यदि नाडी तर्जनीको सर्वांश और मध्यमा उंगलीके चतुर्थांशमें व्याप्त प्रतीत होवे और मध्यमाके अवशिष्ट पादत्रय और अनामिकाके सर्वांशमें न प्रतीत हो तो उस रोगीकी तीन दिनमें मृत्यु होय ॥ ९३ ॥

पादाङ्गुलगता नाडी कोष्णा वेगवती भवेत् ।
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९४ ॥

नाडी पूर्ववत् तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थांशमें व्यापक हो जल्दी जल्दी चले और किञ्चिन्मात्र गरम प्रतीत हो तो उस रोगीकी चार दिनमें निश्चय मृत्यु होय ९४॥

पादाङ्गुलगता नाडी मन्दमन्दा यदा भवेत् ।
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९५ ॥

नाडी पूर्ववत् तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थांशमें व्याप्त हो मन्द मन्द चले तो उस रोगीकी पांचवें दिन मृत्यु होय ॥ ९५ ॥

नाडीद्वारा आयुका ज्ञान ।

वामनाडी दीर्घरेखा बाहुमूले च स्पन्दते ।
जीवेत्पञ्चशतं वर्षं नात्र कार्या विचारणा ॥ ९६ ॥

जिस रोगीकी वामनाडी दीर्घरेखाके आकारसे भुजाकी जडमें तडफे वह १०५ वर्ष जीवे इसमें सन्देह नहीं ॥ ९६ ॥

दीर्घाकारा वामनाडी कर्णमूले च स्पन्दते ।
जीवेत्पञ्चशतं सार्द्धं धनिको धार्मिको भवेत् ॥ ९७ ॥

जिसकी वामनाडी आकारमें लम्बी होकर कानकी जडमें प्रतीत होय वह सार्ध पंचशत वर्ष जीवे और धनिक तथा धार्मिक होय ॥ ९७ ॥

वामनाडी स्वल्परेखा हनुमूले च स्पन्दते ।
पञ्चवर्षाधिकं चैव जीवनं नात्र संशयः ॥ ९८ ॥

जिसकी वामनाडी स्वल्परेखामें हो ठोडीकी जडमें तडफे वह पांच वर्ष अधिक जीवे इसमें सन्देह नहीं ॥ ९८ ॥

नाडीद्वारा भोजनका ज्ञान ।

पुष्टिस्तैलगुडाहारे मांसे च लगुडाकृतिः ।
क्षीरे च स्तिमिता वेगा मधुरे भेकवद्गतिः ॥ ९९ ॥
रम्भागुडवटाहारे रूक्षशुष्कादिभोजने ।
वातपित्तार्त्तिरूपेण नाडी वहति निष्क्रमम् ॥ १०० ॥

तैल और गुडके खानेसे नाडी पुष्ट प्रतीत होती है, मांसेके खानेसे नाडी लकडीके आकार चलती है, दूधपानसे मन्द गतिसे चलती है, मधुर आहारसे नाडी मेंडकके समान चलती है। केला, गुड, बडा रूक्षवस्तु और शुष्क द्रव्यादि भोजनसे जसी वातपित्तरोगमें नाडी चलती है उसी प्रमाण चले है ॥ ९९ ॥ १०० ॥

नाडीद्वारा रसज्ञान ।

मधुरे बर्हिगमना तिक्ते स्यात्स्थूलता गतेः ।[1]
अम्ले कोष्णात्प्लवगतिः कटुके भृङ्गसन्निभा ॥ १०१ ॥
कषाये काठिना म्लाना लवणे सरला द्रुता ।[2]
एवं द्वित्रिचतुर्योगे नानाधर्मवती धरा ॥ १०२ ॥

मिष्ट पदार्थ भक्षणसे नाडी मोरकी चाल चलती है, कडुई द्रव्यभक्षणसे स्थूलगति, खट्टे पदार्थ खानेसे कुछ उष्ण और मेंडककी गति होती है. चरपरी द्रव्य खानेसे भौंरेकी आकार गति होती है. कषैली द्रव्य खानेसे नाडी कठोर और म्लान होती है. निमकीन पदार्थ खानेसे सरल (सीधी) और जल्दी चलनेवाली होती है इसी प्रकार भिन्न २ रसके एक ही समय सेवन करनेसे नाडी अनेक प्रकारकी गतिवाली होती है ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

अम्लैश्च मधुराम्लैश्च नाडी शीता विशेषतः ।
चिपिटैर्भृष्टद्रव्यैश्च स्थिरा मन्दतरा भवेत् ॥ १०३ ॥
कूष्माण्डमूलकैश्चैव मन्दा मन्दा च नाडिका ।
शाकैश्च कदलैश्चैव रक्तपूर्णेव नाडिका ॥ १०४ ॥

खट्टे पदार्थ अथवा मधुराम्ल (मिष्ट और खट्टा मिला) भोजनसे नाडा शीतल होती है। चिरव और भूनी हुई (चना, बोहरी) द्रव्य भक्षणसे नाडी स्थिर और मंदगति चलती है. पेठा, मूली अथवा कंदपदार्थके भक्षणसे नाडी मंद

१ 'तिक्ते स्याद्धुलता गतिः' पा० । २ 'कषायेऽकठिनाऽम्लना' इति वा पाठः ।

मन्द चलती है, शाक (पत्रपुष्पादि) का और केलेकी फली भक्षण करनेसे नाडी रक्तपूर्णके सदृश चले ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

मांसादि भक्षणकी नाडी ।

मांसात्स्थिरवहा नाडी दुग्धे शीता बलीयसी ।
गुडैः क्षीरैश्च पिष्टैश्च स्थिरा मन्दवहा भवेत् ॥ १०५ ॥
द्रवेऽतिकठिना नाडी कोमला कठिनापि च ।
द्रवद्रव्यस्य काठिन्ये कोमला काठिनापि च ॥ १०६ ॥

मांसभक्षणसे नाडी मंदगामिनी होती है, दूधके पीनेसे नाडी शीतल और बलवती होती है. तथा गुड, दूध और पिष्टपदार्थ (चूनके पिठी आदिके पदार्थ) भक्षणसे नाडी चंचलतारहित मंदगामिनी होती है, द्रवपदार्थ (कढी, पने, श्रीखंड आदि) भोजनसे नाडी कठिन होती है और कठोर लड्डू, सुहार आदिसे नाडी कोमल होती है, यदि द्रवपदार्थ कुछ कठोर होय तो नाडी कोमल और कठोर उभय स्वभाववती होती है ॥ १०५ ॥ १०६ ॥

उपवासाद्भवेत्क्षीणा तथा च द्रुतवाहिनी ।
सम्भोगान्नाडिका क्षीणा ज्ञेया द्रुतगतिस्तथा ॥ १०७ ॥

उपवास (निराहार) से नाडी क्षीण और शीघ्रवाहिनी होती है एवं स्त्रीसंभोगसे नाडी क्षीण और शीघ्र चलनेवाली होतीहै ॥ १०७ ॥

कुपथ्यवशनाडीकी चाल ।

उष्णत्वं विषमा वेगा ज्वरिणां दधिभोजनात् ॥ १०८ ॥

यदि ज्वरवान् पुरुष दही खाय तो उसकी नाडी गरम और विषमवेगवती होती है ॥ १०८ ॥

इति श्रीमाथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण संकलिते नाडीदर्पणे द्वितीयावलोकः ॥ २ ॥

तृतीयावलोकः ।

ज्वरके पूर्वरूप ।

अङ्गग्रहेण नाडीनां जायन्ते मन्थरा प्लवाः ।
प्लवः प्रबलतां याति ज्वरदाहाभिभूतये ।
सान्निपातिकरूपेण भवन्ति सर्ववेदनाः ॥ १ ॥

अब इसके उपरान्त कितनेक रोगोंकी नाडीकी जैसी अवस्था होती है, उसको लिखते हैं, तहां रोगनिरूपणमें प्रधानता करके प्रथम ज्वरनिरूपण करते हैं—

ज्वर आनेवाली अवस्थाके कितनेक क्षण पहिले अंगमें पीडा होने लगे, नाडी मंथर (मंद) भावसे मेंडककी चाल चलने लगे तथा दाह ज्वरकी पूर्वावस्थाके व धारामें वहनेवाले मेंडकके समान तथा सांनिपातिक ज्वरकी पूर्व अवस्थाके प्रमाण नाना आकृतिसे गमन करे ॥ १ ॥

ज्वरके रूपमें।

ज्वरकोपेन धमनी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥ २ ॥

जिस कालमें इस प्राणीको ज्वर चढ आता है उस समय नाडी गरम और वेगवती होती है ॥ २ ॥

ऊष्मा पित्तादृते नास्ति ज्वरो नास्त्यूष्मणा विना।
उष्णा वेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते ॥ ३ ॥

विना पित्तके गरमी नहीं और विना गरमीके ज्वर नहीं होता, अत एव ज्वरके वगेमें नाडी गरम आर वेगवती होती है ॥ ३ ॥

ज्वरे च वक्रा धावन्ती तथा च मारुतप्लवे।
रमणान्ते निशि प्रातस्तथा दीपशिखा यथा ॥ ४ ॥

ज्वरके कोपमें और बादीमें नाडी टेढी और दौडती चलती है तथा मैथुन करनेके पिछाडी रात्रिमें और प्रातःकालमें नाडी दीपशिखाके समान मंद गमन करती है ॥ ४ ॥

सौम्या सूक्ष्मा स्थिरा मन्दा नाडी सहजवातजा।
स्थूला च कठिना शीघ्रा स्पन्दते तीव्रमारुते।
वक्रा च चपला शीतस्पर्शा वातज्वरे भवेत् ॥ ५ ॥

वातज्वरमें–स्वाभाविक वायुके द्वारा नाडी कोमल, सूक्ष्म, स्थिर और मंद वेगवाली होती है। तीव्रवायुद्वारा नाडी स्थूल, कठिन तथा जल्दी चलनेवाली होती है और वातज्वरमें टेढी, चपल तथा शीतल स्पर्शवान् नाडी होती है ॥ ५ ॥

द्रुता च सरला दीर्घा शीघ्रा पित्तज्वरे भवेत्।
शीघ्रमाहननं नाड्याः काठिन्याच्चलते तथा ॥ ६ ॥

पित्तज्वरमें–नाडी शीघ्र चलनेवाली, सरल, दीर्घ और कठिनताके साथ शीघ्र फडकनेवाली होती है ॥ ६ ॥

नाडी तन्तुसमा मन्दा शीतला श्लेष्मदोषजा[1]।

---

१ 'मन्दा च सुस्थिरा शीता पिच्छला श्लेष्मिणी भवेत्' इति पाठान्तरम्।

मलाजीर्णे नातितरां स्पन्दनं च प्रकीर्तितम् ॥ ७ ॥

कफके ज्वरमें-नाडी तंतुवत् सूक्ष्म मन्द वेगवाली और शीतल होती है और मलाजीर्णमें अत्यन्त नहीं फडकती ॥ ७ ॥

द्वंद्वजनाडी ।

चञ्चला[1] तरला स्थूला कठिना वातपित्तजा ।
ईषच्च दृश्यते तूष्णा मन्दा स्याच्छ्लेष्मवातजा ॥ ८ ॥
निरन्तरं खरं रूक्षं मन्दश्लेष्मातिवातलम् ।
रूक्षवाते भवेत्तस्य नाडी स्यात्पित्तसन्निभा ॥ ९ ॥
सूक्ष्मा शीता स्थिरा नाडी पित्तश्लेष्मसमुद्भवा ॥ १० ॥

वातपित्तकी नाडी चञ्चल, तरल, स्थूल और कठोर होती है। वातकफकी नाडी कुछ गरम और मन्दगामिनी होती है। जिस नाडीमें किंचिन्मात्र कफ और अधिक वात होती है वह अत्यन्त खर और रूक्ष होती है। जिसके नाडीमें वायुका अत्यन्त कोप होय उसकी पित्तके सदृश अर्थात् अत्यन्त वक्र और अत्यन्त स्थूल होय। पित्तकफ ज्वरमें-नाडी सूक्ष्म, शीतल और मन्दवेगवाली होती है ॥ ८-१० ॥

रुधिरकोपजा नाडी ।

मध्ये करे वहेन्नाडी यदि सन्तापिता ध्रुवम् ।
तदा नूनं मनुष्यस्य रुधिरापूरिता मलाः ॥ ११ ॥

मध्य करमें अर्थात् मध्यमांगुली निवेशस्थलमें नाडी संतापित होकर तडफे तो जाने कि, वातादि दोषत्रय रक्तप्रकोपकरके परिपूर्ण है अर्थात् रुधिरसे दूषित है॥ ११॥

आगन्तुकरूपभेद ।

भूतज्वरे सेक इवातिवेगाद् धावन्ति नाड्यो हि यथाब्धिगामाः ।

भूतज्वरमें नाडी अत्यन्त वेगसे चलती है जैसे समुद्रमें जानेवाली नदियोंका प्रवाह वेगसे चलता है ॥ १२ ॥

विषमज्वरमें नाडीकी गति ।

एकाहिकेन क्वचन प्रदूरे क्षणान्तगामा विषमज्वरेण ।
द्वितीयके वाथ तृतीयतुर्य्ये गच्छन्ति तप्ता भ्रमिवत्क्रमेण ॥ १३ ॥

एकाहिक ज्वरमें नाडी सरलमार्गको त्यागकर क्षणक्षणमें पार्श्वगामिनी

---

१ 'वक्रा च ईषच्चपला कठिना वातपित्तजा' इति पाठान्तरम् ।

होती है तथा द्वितीय तृतीय (तिजारी) और चातुर्थनामक विषमज्वरमें तप्त होकर इतस्ततो धावमान होती है ॥ १३ ॥

अन्यत्रापि-उष्णवेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते ।
उद्वेगक्रोधकामेषु भयचिन्ताश्रमेषु च ।
भवेत् क्षीणगतिर्नाडी ज्ञातव्या वैद्यसत्तमैः ॥ १४ ॥

गरम और वेगवान् नाडी ज्वरके कोपमें होती है । उद्वेग, क्रोध, कामबाधा, भय, चिन्ता और श्रम इनमें नाडी क्षीणगतिवाली होती है अर्थात् मन्द मन्द गमन करती है। १४॥

व्यायाम-भ्रमणादिकी नाडी ।

व्यायामे भ्रमणे चैव चिन्तायां श्रमशोकतः ।
नानाप्रभावगमना शिरा गच्छति विज्वरे ॥ १५ ॥

व्यायाम (दण्ड कसरत) करनेसे, डोलनेसे, चिंता, श्रम और शोकसे एवं ज्वर रहित मनुष्यकी नाडी अनेक प्रभावसे गमन करती है ॥ १५ ॥

अजीर्णमें नाडीकी गति ।

अजीर्णे तु भवेन्नाडी कठिना परितो जडा ।
प्रसन्ना च द्रुता शुद्धा त्वरिता च प्रवर्तते ॥ १६ ॥

आमाजीर्ण और पक्काजीर्ण दोनोंमें नाडी कठोर और दोनों पार्श्वोंमें जड होती है इसी प्रकार कभी निर्मल निर्दोष तथा शीघ्रवेगवाली होती है ॥ १६ ॥

पक्काजीर्णे पुष्टिहीना मन्दं मन्दं वहेज्जडा ।
असृक्पूर्णा भवेत् कोष्णा गुर्वी सामा गरीयसी ॥ १७ ॥

पक्काजीर्णमें नाडी पुष्टतारहित मन्द मन्द चलती है तथा भारी होती है एवं रुधिर करके परिपूर्ण नाडी गरम, भारी होती है और आमवातकी नाडी भारी होती है ॥१७॥

लघ्वी भवति दीप्ताग्नेस्तथा वेगवती मता ।
मन्दाग्नेः क्षीणधातोश्च नाडी मन्दतरा भवेत् ।
मन्देऽग्नौ क्षीणतां याति नाडी हंसाकृतिस्तथा ॥ १८ ॥

दीप्ताग्निवाले मनुष्यकी नाडी हलकी और वेगवती होती है, मन्दाग्निवालेकी और क्षीणधातु पुरुषकी नाडी मन्दतर होती है, इसी प्रकार जिस मनुष्यकी जठराग्नि सर्वथा मन्द हुई हो उसकी नाडी हंसके समान अतिशय मंद होती है ॥ १८ ॥

आमाश्रमे पुष्टिविवर्धनेन भवन्ति नाड्यो भुजगाग्रमानाः।
आहारमान्द्यादुपवासतो वा तथैव नाड्योऽग्रभुजाभिवृत्ताः॥१९॥

आम और परिश्रम न करनेसे तथा देहमें अत्यंत पुष्टता होनेसे नाडी सर्पके अग्र-भागके सदृश होती है, इसी प्रकार थोडा भोजन करनेसे या उपवास करनेसे नाडी भुजाके अग्रभागमें सर्पके अग्रभागके समान होती है॥ १९॥

ग्रहणीरोगमें नाडीकी गति।

पादे च हंसगमना करे मण्डूकसंप्लवा।
तस्याग्नेर्मन्दता देहे त्वथवा ग्रहणीगदे॥ २०॥

जिसकी पैरकी नाडी हंसके समान और हाथकी नाडी मेंडकके समान चले उसके देहमें मंदाग्नि है अथवा संग्रहणी रोग है ऐसा जानना॥ २०॥

भेदेन शान्ता ग्रहणीगदेन निर्वीर्यरूपा त्वतिसारभेदे।
विलम्बिकायां प्लवना कदाचिदामातिसारे पृथुता जडा च॥२१॥

संग्रहणीका दस्त होनेके उपरांत नाडी शांतवेग होती है। अतिसाररोगका दस्त होनेके उपरांत नाडी सर्वथा बलहीन होजाती है, विलंबिकारोगमें नाडी मेंडकके तुल्य चलती है, इसी प्रकार आमातिसारमें नाडी स्थूल और जडवत् होती है॥ २१॥

विषूचिकामें।

निरोधे मूत्रशकृतोर्विड्ग्रहे त्वितराश्रिताः।
विषूचिकाभिभूते च भवन्ति भेकवत्क्रमाः॥ २२॥

केवल मल या केवल मूत्र अथवा मलमूत्र दोनों एक साथ बंद हो जावें या इच्छा-पूर्वक इनके वेगको रोकनेसे एवं विषूचिका रोगमें नाडीकी गति मेंडककी चालके समान होती है॥ २२॥

आनाह-मूत्रकृच्छ्रमें।

आनाहे मूत्रकृच्छ्रे च भवेन्नाडीगरिष्ठता।

आनाह (अफरा) और मूत्रकृच्छ्र रोगमें नाडी गुरुतर अर्थात् भारी होती है॥

शूलरोगमें।

वातेन शूलेन मरुत्प्लवेन सदैव वक्रा हि शिरा वहन्ति।
ज्वालामयी पित्तविचेष्टितेन साध्या न शूलेन च पुष्टिरूपा॥ २३॥

वायुशूलमें और वायुके प्रखरता निबंधनमें नाडी सदैव अत्यंत टेढी चलती है, पित्तके शूलमें यह अतिशय गरम होती है और आमशूलमें पुष्टियुक्त होती है॥२३॥

प्रमेहरोगमें नडीकी गति ।

प्रमेहे ग्रन्थिरूपा सा सुतप्ता त्वामदूषणे ।

प्रमेहरोगमें नाडी ग्रंथि अर्थात् गांठके आकार प्रतीत होती है और आमवातरोगमें नाडी सर्वकालमें उष्ण होती है ॥

विषभक्षण आदिमें ।

उत्पित्सुरूपा विषरिष्टकायां विष्टम्भगुल्मेन च वक्ररूपा ।
अत्यर्थवातेन अधः स्फुरन्ती उत्तानभेदिन्यसमाप्तकाले ॥ २४ ॥

विषभक्षण वा सर्पादिदंशजन्य अरिष्टलक्षण प्रकाशित होनेसे तत्कालमें नाडी देखनेसे बोध होय है कि, इसके यह रोग नवीन उत्पन्न होता है और विष्टंभ तथा गुल्मरोगमें विषके तुल्य और विशेषता यह होती है कि, उस नाडीकी गति वक्ररूप होती है। इन दोनों पीडामें अत्यंत वायुका प्रकोप होनेसे नाडी अधःस्फुरित होय एवं इनका संपूर्णावस्थामें अर्थात् पूर्वरूपावस्थामें नाडी अत्यन्त ऊर्ध्वगति हो ॥२४॥

गुल्मरोगमें ।

गुल्मेन कम्पोऽथ पराक्रमेण पारावतस्येव गतिं करोति ॥ २५ ॥

गुल्मरोगमें नाडी कुपित हो, बलपूर्वक कबूतरकी तुल्य गमन करती है ॥ २५ ॥

भगन्दररोगमें ।

व्रणेऽथ कठिने देहे प्रयाति पैत्तिकं क्रमम् ।
भगन्दरानुरूपेण नाडी व्रणनिवेदने ॥ २६ ॥
प्रयाति वातिकं रूपं नाडी पावकरूपिणी ॥ २७ ॥

व्रणरोगकी अपक्व अवस्थामें नाडीकी गति पैत्तिक नाडीके तुल्य होती है । भगंदर तथा नाडीव्रण रोगमें नाडीकी गति वातनाडीके तुल्य और अत्यंत उष्ण होती है ॥ २६ ॥ २७ ॥

वमित आदिकोंकी नाडीकी गति ।

वान्तस्य शल्याभिहतस्य जन्तोर्वेगावरोधाकुलितस्य भूयः ।
गतिं विधत्ते धमनी गजेन्द्रमरालमानेव कफोल्वणेन ॥ २८ ॥
स्त्रीरोगादिकमपि रक्तादि ज्ञानक्रमेण ज्ञातव्यम् ।

वमित (जिसने रद्द करी हो) , शल्याभिहत (जिसके किसी प्रकारका बाण आदि शल्य लगा हो) और वेगरोधी (जिसने मलमूत्रको धारण कर रखा हो) ऐसे प्राणियोंका नाडी तथा कफोल्वणा नाडी हाथी और हंसादिककी गतिके समान

चलती है, इसी प्रकार रक्तादि ज्ञानकरके अनुरक्त जो स्त्रीके रोग प्रदरादिक उनको भी वैद्य अपनी बुद्धिमानीसे जान लेवे। यह नाडी परीक्षा शंकरसेनके मतानुसार लिखी है ॥ २८ ॥

नाडीस्पन्दनकी संख्या।

षष्ट्या स्पन्दास्तु मात्राभिः षट्पञ्चाशद्भवन्ति हि।
शिशोः सद्यःप्रसूतस्य पञ्चाशत्तदनन्तरम् ॥ २९ ॥
चत्वारिंशत्ततः स्पन्दाः षट्त्रिंशद्यौवने ततः।
प्रौढस्यैकोनत्रिंशत्स्युर्वार्धकेऽष्टौ च विंशतिः ॥ ३० ॥

अब नाडीके फडकनेकी संख्या कहते हैं, जैसे कि ६० दीर्घ अक्षर उच्चारण करनेमें जितना काल लगता है उतने समयमें अर्थात् एक पलमें तत्काल हुए बालककी नाडीकी स्पन्दनसंख्या ५६ वार होती है। इसके उपरान्त अवस्था बढनेके अनुसार ५० तथा ४० वार होती है। यौवन अवस्था अर्थात् जवानीमें ३६ वार होती है और प्रौढ अवस्थामें २९ वार और बुढापेमें २८ वार एक पलमें नाडी फडकती है ॥ २९ ॥ ३० ॥

पुंसोऽतिस्थविरस्य स्युरेकत्रिंशदतः परम्।
योषितां पुरुषाणां च स्पन्दास्तुल्याः प्रकीर्तिताः ॥ ३१ ॥
प्रौढानां रमणीनां तु द्व्यधिकाः सम्मता बुधैः ॥ ३२ ॥

अति वृद्ध होनेसे नाडीकी संख्या फिर बढने लगती है अर्थात् एक पलमें ३१वार तडफती है। यह अवस्थाभेदकरके संपूर्ण स्पन्दनसंख्या लिखीगई है। यह संख्या स्त्री और पुरुष दोनोंमें समान कही है परंतु केवल प्रौढावस्थामें स्त्रीकी नाडीसंख्या पुरुषसंख्याकी अपेक्षा अधिक अधिक अर्थात् प्रौढपुरुषकी स्पन्दनसंख्या प्रतिपलमें २९ वार होती है और प्रौढा स्त्रीकी संख्या ३१ वार होती है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

दशगुर्वक्षरोच्चारकालः प्राणः षडात्मकैः।
तैः पलं स्याच्चु तत् षष्ट्या दण्ड इत्यभिधीयते ॥ ३३ ॥

एक दीर्घ वर्ण उच्चारण करनेमें जितना समय लगता है उसको एक मात्रा अथवा निमिष कहते हैं। १० मात्राका १ प्राण, ६ प्राणका १ पल, ६० पलका १ दंड होता है अत एव एक पलके साठ भाग उसमें एक भागको विपल कहते हैं उसीको मात्रा कहते हैं ॥ ३३ ॥

मतान्तरसे नाडीसंदन ।

स्वस्थानां देहिनां देहे वयोऽवस्थाविशेषतः ।
प्रवहन्ति यथा नाड्यस्तत्संख्यानमिहोच्यते ॥ ३४ ॥

अब मतान्तरसे कहते हैं कि, स्वस्थपुरुषोंके देहमें आयुकी अवस्था विशेषकरके जैसे नाडी चलती है उनकी संख्या इस ग्रन्थमें लिखते हैं ॥ ३४ ॥

सार्द्धद्वयपलः कालो यावद्गच्छति जन्मतः ।
तावत्प्रकम्पते नाडी चत्वारिंशच्छताधिकम् ॥ ३५ ॥

बालकके जन्म लेनेसे यावत् ढाई पल व्यतीत नहीं हो उतने समयमें १४० वार नाडी वारंवार कंपित होती है ॥ ३५ ॥

तदूर्ध्वं हायनं यावत्सार्द्धद्वयपलेन सा ।
मुहुः प्रकम्पमाधत्ते त्रिंशद्वारं शतोत्तरम् ॥ ३६ ॥

फिर १ वर्षकी अवस्थापर्यंत बालककी नाडी २॥ पलमें १३० वार तडफती है ॥३६॥

उपरिष्टादाद्वितीयात्तावत्काले शरीरिणः ।
ततः प्रकम्पते नाडी दशाधिकशतं मुहुः ॥ ३७ ॥

वर्ष दिनसे लेकर जबतक यह बालक दो वर्षका होता है तावत्कालपर्यंत नाडी ढाई पलमें ११० वार वारंवार तडफती है ॥ ३७ ॥

ततस्त्रिवत्सरं व्याप्य देहिनां धमनी पुनः ।
मुहुः प्रकम्पते तद्वत्सार्द्धद्वयपले शतम् ॥ ३८ ॥

दो वर्षसे उपरांत तीन वर्ष तकके बालककी नाडी २॥ पलमें १०० वार वारंवार तडफती है ॥ ३८ ॥

ततस्त्वासप्तमाद्वर्षान्नवतिः स्यात्प्रवेपनम् ।
धमन्यास्तन्मिते काले प्रत्यक्षादनुभूयते ॥ ३९ ॥

फिर तीन वर्षसे सात वर्ष तकके बालककी नाडी २॥ पलमें ९० वार वारंवार चलती है ॥ ३९ ॥

ततश्चतुर्दशं तावत्पञ्चाशितिः प्रवेपनम् ।
त्रिंशद्वर्षमभिव्याप्य ततोऽशीतिः प्रकीर्तितम् ॥ ४० ॥

शताब्दवत्सरं व्याप्य कम्पनं पञ्चसप्ततिः।
ततोऽशीतौ प्रकथितं षष्टिवारं प्रवेपनम् ॥ ४१ ॥

फिर सात वर्षसे लेकर चौदह वर्षकी अवस्थातक इस प्राणीकी नाडी ढाई पलमें ८५ वार तडफती है। और चौदह वर्षकी अवस्थासे लेकर ३० वर्षकी अवस्थापर्यन्त ढाई पलमें ८० वार तडफती है। तीस वर्षके उपरान्त पचास वर्ष पर्यन्त ७५ वार कम्पित होती है और पचास वर्षसे लेकर अस्सी वर्षकी अवस्था तक इस प्राणीकी नाडी २॥ पलमें ६० वार कम्पित होती है ॥ ४० ॥ ४१ ॥

वयोऽवस्थाक्रमेणैवं क्षीयन्ते गतयो मुहुः।
सार्धद्वयपले काले नाडीनामुत्तरोत्तरम् ॥ ४२ ॥

फिर जैसे जैसे अवस्था क्षीण होतीजाती है उसी प्रकार नाडीका गमन भी ढाई पलमें क्षीण होता जाता है ॥ ४२ ॥

एवं बहुविधाद्रोगात्तत्तल्लिङ्गानुबोधिनी।
नाडीनां च गतिस्तद्वद्भवेत्कालात्पृथक्पृथक् ॥ ४३ ॥

इस प्रकार अनेकविध रोगोंसे उन्हीं लिंगोंकी बोधन करनेवाली नाडियोंकी गति पृथक् २ कालमें पृथक् २ होती है ॥ ४३ ॥

नाडीस्पन्दनमें कारण।

हृदयस्य बृहद्भागः सङ्कोचं प्राप्यते यदि।
प्रसारयेत्तदा नाडी वायुना रक्तवाहिनी ॥ ४४ ॥

जिस समय हृदयका बृहद्भाग संकुचित होता है और खुलता है उस समय रक्त-वाहिनी नाडियोंकी गति पवनके वेगसे प्रस्पन्दन होती है ॥ ४४ ॥

नाडी अतिक्षीण होनेका कारण।

नाडीगतिरतिक्षीणा भवेन्मलविभेदतः।
जीर्णज्वरादल्परक्ताद्दुर्बलत्वाच्च तादृशी ॥ ४५ ॥

मलके निकलनेसे नाडीकी गति अत्यन्त क्षीण होती है। उसी प्रकार जीर्णज्वरसे अल्परुधिरसे और दुर्बलतासे भी नाडी अति क्षीण होती है ॥ ४५॥

तर्पयन्त्यसृजं देहे व्याघातैर्गतिभेदतः।
तेजःपुञ्जा चञ्चला च दुर्बला क्षीणधीरगैः ॥ ४६ ॥

ये सम्पूर्ण रक्तवाहिनी नाडी आघात करके और अपनी गतिके भेदसे देहमें रुधिरको तर्पण करे हैं अर्थात् सर्वत्र फैलती हैं। उनकी गतिके भेद कहते हैं जैसे—तेजःपुंजा, चञ्चला, दुर्बला, क्षीणदा और धीरगामिनी ये नाडियोंकी पांच प्रकारकी गति हैं ४६

चञ्चला और तेजःपुंजकी गति ।

रक्तोष्णे शीघ्रगा नाडी ज्वरे च चञ्चला भवेत् ।
ज्वरारम्भे तथा वाते तेजःपुञ्जागतिः शिरा ॥ ४७ ॥

जहां रुधिरके कोपमें, गरमीमें नाडी शीघ्र चलती है उसी प्रकार ज्वरमें चञ्चला नाडी होती है और ज्वरके आरम्भमें तथा वातके रोगमें नाडीकी तेजःपुंजा गति होती है ॥४७॥

दुर्बला और क्षीणकी नाडी ।

दुर्बले ज्वररोगे च अतिसारे प्रवाहिके ।
दुर्बला क्षीणदा नाडी प्रबला प्राणघातिका ॥ ४८ ॥

दुर्बलतामें, ज्वरमें, अतिसार और प्रवाहिकारोगमें नाडीकी दुर्बल गति होती है क्षीण नाडी प्रबल प्राणोंकी नाशक होती है ॥ ४८ ॥

बहुकालगती रोगा सा नाडी धीरगामिनी ।

जिस प्राणीके बहुत दिनोंसे रोग होवे उसकी नाडी धीरगामिनी होती है ॥

सुखी पुरुषकी नाडी ।

हंसगा चैव या नाडी तथैव गजगामिनी ।
सुखं प्रशस्तं च भवेत्तस्यारोग्यं भवेत्सदा ॥ ४९ ॥

जिस प्राणीकी नाडी हंसकीसी अथवा हाथीकीसी चाल चले उसको उत्तम सुख होय और सदैव आरोग्य रहे ॥ ४९ ॥

सुव्यक्तता निर्मलत्वं स्वस्थानस्थितिरेव च ।
अमन्दत्वमचाञ्चल्यं सर्वासां शुभलक्षणम् ॥ ५० ॥

उत्तम प्रकारसे प्रतीत होती हो, निर्मल, अपने स्थानमें स्थित, अमन्दत्व और चांचल्यरहित हो ये सम्पूर्ण नाडियोंके शुभ लक्षण जानने ॥ ५० ॥

युक्ति अनुमानादिसे नाडीज्ञान ।

दोषसाम्याच्च साहश्यादनुक्तासु रुजास्वपि ।
ज्ञातव्या धमनीधर्मा युक्तिभिश्चानुमानतः ॥ ५१ ॥

यह कितने एक रोगोंमें नाडीकी प्रकृति लिखी है, इससे भिन्न अन्य समस्त रोगोंमें जैसी जैसी नाडियोंकी गति होती है उसको वैद्य अनुमान और युक्तिद्वारा जाने अर्थात् जिस रोगका जिस जिस रोगके साथ साहश्यता है अथवा जिस किसी रोगमें सम्पूर्ण कुपित दोषोंके साथ अन्य किसी रोगके कुपित दोषोंकी साम्यता मिले उन समस्त रोगोंमें नाडीकी एकविध गति होती है ऐसा जानना ॥ ५१ ॥

नाडीदर्शनानंतर हस्तप्रक्षालन ।

नाडीं दृष्ट्वा तु यो वैद्यो हस्तप्रक्षालनं चरेत् ।
रोगहानिर्भवेच्छीघ्रं गङ्गास्नानफलं लभेत् ॥ ५२ ॥

जो वैद्य रोगीकी नाडी देखकर हाथको जलसे धोता है तो जिस रोगीकी नाडी देखी उसका रोग शीघ्र नष्ट होय और वैद्यको गंगास्नानका फल प्राप्त होय ॥ ५२॥

यो रोगिणः करं स्पृष्ट्वा स्वकरं क्षालयेद्यदि ।
रोगास्तस्य विनश्यन्ति पङ्कः प्रक्षालनाद्यथा ॥ ५३ ॥

जो वैद्य रोगीकी नाडी देख अपने हाथको धोता है इस कर्मसे जैसे धोनेसे कीच जाती है इस प्रकार उस रोगीका रोग दूर होता है ॥ ५३ ॥

इति श्री माथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण संकलिते नाडीदर्पणे तृतीयावलोकः ॥ ३ ॥

चतुर्थावलोकः ।

यूनानीमतानुसार नाडीपरीक्षा ।

नाडीनामान्तरं नब्जं यूनानीवैद्यके मतः ।
विधास्ये तत्क्रमं चात्र वैद्यानां कौतुकाय च ॥ १ ॥

यूनानी वैद्य नाडीको नब्ज कहते हैं उस नब्जका क्रम अर्थात् नब्जपरीक्षाको मैं वैद्योंके कौतुकनिमित्त लिखता हूं ॥ १ ॥

---

१ मानसिक शिराके परिवर्तनको नाडी कहते हैं । वह मनके प्रफुल्लित और संकुचित होनेसे चलती है । इसका यह कारण है कि, उसके विकसित होनेसे बाहरी पवन भीतर जाती है, इसीसे हयवानीरूह जो मनमें है वह प्रसन्न होती है और उष्ण पवनसे दूर करनेको हृत्पद्म संकुचित होता है, इन दोनों कारणोंसे मनुष्यके संपूर्ण देहकी चेष्टा और उसके रोग तथा स्वस्थताका ज्ञान होता है, इस नाडीके दश भेदोंसे शरीरकी चेष्टा प्रतीत होती है । प्रथम तो यह कि यह कितनी विकसित और कितनी संकुचित होती है इसके विस्तार (लंबाव) आयात (चौडाव) और गम्भीरादि भेदसे नौभेद होते हैं अर्थात् कितनी लंबी कितनी चौडी और कितनी गंभीर इन तीनोंको अधिक न्यून और समानताके साथ प्रत्येकके गुणन करनेसे नौ भेद हो जाते हैं—जैसे १ दीर्घ, २ ह्रस्व, ३ समान, ४ स्थूल, ५ कृश, ६ समानविस्तृत, ७ बहिर्गति अत्युच्च, ८ अंतर्गति अतिनीच और ९ उच्चनीचत्वसमान । १ अतिलंबनाडीमें अति उष्णताके कारण रोगकी अधिकता प्रतीत होती है । २ न्यूनलंबे-नाडीमें गरमीके न्यून होनेसे रोगकी न्यूनता प्रतीत होती है । ३ समान लंबनाडीमें प्रकृतिकी उष्णता यथार्थ रहती है । ४ अधिक विस्तृतमें सरदी अधिक होती है अतएव यह नाडी अपने अनुमानसे अधिक चौडी होती है ॥

हयवानी नफसानी नाडी।

हयवानी चैव नफसानी रूहद्वयमुदाहृतम्।
हृदयस्थं शिरःस्थं च देही देहसुखावहम् ॥ २ ॥

रूह दो प्रकारकी है एक हयवानी दूसरी नफसानी। हयवानी हृदयमें रहती है और नफसानी मस्तकमें रहती है। ये दोनों देहधारियोंके देहको सुखदायक हैं ॥ २ ॥

शुरीयान नाडी।

तत्सङ्गतास्तु या नाड्यः शुरियानसवः क्रमात्।
हृत्पद्मे यास्तु संलग्ना समन्तात्प्रस्फुरन्ति ताः ॥ ३ ॥

उस रूहके साथ लगी हुई जो नाडी हैं वे दो हैं, एक शुरियान् दूसरी असव। इनमें शुरियान् नाडी हृत्पद्ममें लग रही है उससे सर्वत्र स्फुरण होता है ॥ ३ ॥

असव नाडी।

शिरोन्तर्मार्गसम्बद्धास्ताभिश्चेष्टादिकं भवेत्।
श्रेष्ठो जीवनिवासो हृद्राज्ञो राज्यासनं यथा ॥ ४ ॥

और दूसरी असव नामक जो नाडी है वह शिरोन्तर्भाग अर्थात् मस्तकके भीतर लग रही है, इन नाडियोंकरके इस देहकी चेष्टादि होती है। जैसे राजा राजसिंहासन-पर स्थित हो शोभित होता है उसी प्रकार जीवका श्रेष्ठनिवास हृदय स्थान है ॥ ४ ॥

चार अंगुलियोंसे नाडी परीक्षा।

तद्भवा धमनी मुख्या मनुष्यमणिबन्धगा।
परीक्षणीया भिषजा ह्यङ्गुलीभिश्चतसृभिः ॥ ५ ॥

उन हृद्गत नाडियोंमें मनुष्यके पहुँचेकी धमनी नाडी मुख्य है। उसको वैद्य चार उंगली रखकर परीक्षा करे। अपने शास्त्रमें तीन उंगलीसे परीक्षा करना लिखा है परंतु यूनानी वैद्य चार दोषोंको चार उंगलीसे देखना कहते हैं ॥ ५ ॥

नाडीकी गिजाली आदि गति।

यथैणगतिपर्यायस्तद्वदुत्प्लुत्य गच्छति।
गिजाली गतिराख्याता पित्तकोपविकारतः ॥ ६ ॥

जैसे मृगका बच्चा उछलता कूदता चलता है इस प्रकार नाडीकी गतिको गिजाली कहते हैं। यह पित्तकोपविकारको सूचित करती है ॥ ६ ॥

तरङ्गनाम मौजः स्यान्मौजी गतिरितीरिता।
निवेदयति वर्ष्मस्थं वायोरूष्माणमेव सा ॥ ७ ॥

यूनानी जलकी लहरको मौज कहते हैं। उस मौज सदृश नाडीकी गतिको मौजी गति कहते हैं। यह देहस्थ पवनकी गरमीको जाहिर करती है ॥ ७ ॥

दूदः स्यात् कृमिपर्यायो दूदी तस्य गतिः स्मृता।
श्लेष्माणसञ्चयं चामं प्रकटीकुरुते हि सा ॥ ८ ॥

दूद (कानसलाई आदि) कृमिका पर्याय है, अतएव तद्विशिष्टा नाडीकी गतिको दूदी गति कहते हैं। यह कफके संचयको और आमको प्रकाशित करती है ॥ ८ ॥

उमलश्पिपीलिका मोर उमली तद्गतिः स्मृता।
यस्य नाडी तथा गच्छेन्मृतिं तस्याशु निर्दिशेत् ॥ ९ ॥

उमल चैंटी (कीडी) और मोरका नाम है अतएव इन्होंकीसी गतिको उमली गति कहते हैं। जिस पुरुषकी नाडी ऐसी अर्थात् मोर चैंटीकीसी चले वह प्राणी जल्दी मृत्युको प्राप्त हो ॥ ९ ॥

असिपत्रस्य पर्यायो मिन्शार इति कीर्त्तितः।
यथा स्यात्तत्क्रमः काष्ठे मिन्शारी सा गतिर्भवेत्।
तद्गतिं धमनी धत्ते बाह्यान्तः शोथरोगिणः ॥ १० ॥

आरेका पर्याय यूनानीमें मिन्शार है। वह जैसे लकडीके ऊपर चलता है इस प्रकार नाडीके गमन करनेको मिन्शारी गति कहते हैं। इस प्रकारकी नाडी बाहर भीतर शोथरोगीके चलती है ॥ १० ॥

जन्वलफारनाम्नी या गतिर्मूषकपुच्छवत्।
पित्तश्लेष्मप्रकोपेण धमन्याः सम्भवेत्किल ॥ ११ ॥

जिस नाडीकी गति मूषक (चूहे) की पुच्छसदृश हो अर्थात् एक ओरसे मोटी और दूसरी तरफ क्रमसे पतली हो उसको जन्वलफार गति कहते हैं, यह पित्त-कफके कोपमें होती है ॥ ११ ॥

माली शलाकासदृशी सूक्ष्मा धीरा बलात्ययात् ॥ १२ ॥
गत्याघातद्वयं यस्यामधस्तादङ्गुलेर्भवेत्।
जुलफिकरस्तत्स्मृता पित्तश्लेष्मदग्धप्रबोधिनी ॥ १३ ॥

जो नाडी सलाईके आकार अत्यन्त सूक्ष्म और धीरगामिनी होय वह माली

कहाती है, यह बल नष्ट होनेसे होती है और जो नाडी मध्यमांगुलीमें दोवार आघात करे वह पित्तकफदग्धको बोधन करती है इसको जुलफिकरत् कहते हैं ॥१२॥१३॥

मुर्तइद् प्रस्फुरन्ती या गतिः कोष्ठस्य रूक्षताम् ।
विड्ग्रहत्वं च सौदावी विचारान् ज्ञापयत्यपि ॥ १४ ॥

जिस नाडीके प्रस्फुरणसे कोठेकी रूक्षता प्रगट होवे उसको मुर्त्तइद कहते हैं और इसीसे मलबन्धका ज्ञान होता है। यह सौदावी (वदाकी) नाडीके विचारसे जाने ॥ १४ ॥

इर्तिशा कम्पपर्यायस्तद्विशिष्टा तु या भवेत् ।
मुर्त्तइस्नाम सा ज्ञेया सफरासौदाविकारयुक् ॥ १५ ॥

कम्पको फारसीमें इर्तिशा कहते हैं. उसके समान जो नाडी हो उसको मुर्त्तइस नाडी कहते हैं। यह सफ्रा (पित्त) और सौदा दोनोंके मिश्रितावस्थामें होती है॥१५॥

मुम्तिला पूर्ति तूद्दिष्टाऽसुजोस्यां मुम्तिली तु सा ।
तमः कफादधोगा या मुन्खफिज् सा प्रकीर्तिता ॥१६ ॥

परिपूर्णको फारसीमें मुम्तिला कहते हैं अतएव जिस नाडीसे रुधिरकी परिपूर्णता प्रतीत हो उस नाडीकी गतिको मुम्तिली कहते हैं। जो नाडी तमोगुण या कफसे अधोभागमें गमन करे उसको मुन्खफिज् नाडी कहते हैं ॥ १६ ॥

ऊर्ध्वमुत्प्लुत्य या गच्छेत्किंचिन्मायुप्रकोपतः ।
शाहक्बुलन्द सा ख्याता धमनीसंपरीक्षकैः ॥ १७ ॥

जो नाडी पित्तके प्रकोपसे उछलकर ऊपरको गमन करे उसको नाडीके ज्ञाता वैद्य शाहक्बुलन्द कहते हैं ॥ १७ ॥

चतुरङ्गुलिसंस्थानादपि दीर्घा तवीलसा ।
दराज इति पर्यायस्तस्या एव निपातितः ॥ १८ ॥

जो नाडी चार अंगुलसे भी अधिक लंबी हो उसको तवीलसा ऐसा कहते हैं और उसी नाडीका नामान्तर दराज है ॥ १८ ॥

परिमाणान्न्यूनरूपा सा कसीर समीरिता ।
अमीक निम्नगा या च अरीज आयती स्मृता ॥ १९ ॥

जितना नाडीका परिमाण कहा है यदि उससे न्यून हो उसको कसीर कहते हैं और अधो गामिनी नाडीको अमीक कहते हैं और लंबी नाडीको अरीज कहते हैं ॥ १९॥

यथा गतिस्तु दोषाणां धत्ते ग्राह्यत्वहीनते।
गलवे कसूर अरक्कात तारतम्येन निर्दिशेत् ॥ २० ॥

दोषोंके यथागति अनुसार नाडीको बली और निर्बली जानना इसके बली निर्बल आदि नाडियोंके गलवे, कसूर और अरक्कातके तारतम्यसे कहे ॥ २० ॥

वाकियुलवस्त निर्दोषः स्वस्थस्य परिकीर्तिता।
इति संक्षेपतो नाडीपरीक्षा कथिता बुधैः।
विस्तरस्तु मयां प्रोक्तो भाषायां जनहेतवे ॥ २१ ॥

स्वस्थ:प्राणीकी निर्दोष नाडीको वाकियुलवस्त कहते हैं। यह मैंने संक्षेपसे यूयानी मतानुसार नाडीपरीक्षा कंही है, इसका विस्तार मैंने भाषामें कहा है ॥ २१ ॥

यूनानी मतानुसार नाडीकोष्ठक।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
गिजालि	भोजी	दूदी	मिन्शारी	जनवल फार	नुम्ली	मतली	मतरकी	जुलफि करत	वाफ ऑफ लवस्त
मृग शावक	तरंग	कृमि	आरा	मूंसेकी पूंछ	मोर चैंटी	शलाई	हथोडा	शोकाक्रांत समान	विषम टंकोर देना
मृगके बच्चेके समान जो नाडी उछलती कूदती चले उसको गिजाली कहतेहैं यह पित्ताधिक्यसे होती है।	जो नाडी जलके तरंगके समान गमनकरे उसको मोजी गति कहतेहैं। यह तरीको सूचित करतीहै। अथवा देहकी निर्बलताको सूचित करेहैं	जो नाडी कीडाके समान मंद मंद गमनकरे वो कफ और आम दोपको सूचित करतीहै। इस नाडीकी गतिको दूदी कहतेहैं।	जैसे लकडीके ऊपर आरा चलता इसप्रकार खरदराट लिये जो नाडी उंगलियोंका स्पर्शकरे वो बाहर और भीतर सूजनको सूचित करतीहै। इस गतिको मिन्शारो गति कहतेहैं।	जो नाडी चूहेकी पूंछसदृस गमन करे उसको जनवुल्फार गति कहतेहैं। यह कफपित्तके कोपसे होती है।	जो नाडी चैंटी और मोरकी गतिके समान गमन करे उसको नुम्ली गति कहतेहैं, ऐसी नाडी रोगीकी शीघ्र मृत्यु सूचना करतीहै।	जो नाडी सलाईके समान दोनों प्रांतोंमें पतली और बीचमें मोटी होकर गमन करे उसको मतली गति कहतेहैं। यह निर्बलता सूचना करती है	जो नाडी हथोडेके समान उंगलियोंको वारंवार चोट देवे उसको मतरकी गति कहतेहैं। यह अत्यंत गरमीकी सूचना करती है।	जो नाडी गमन करते२ ठहर जावे उसको जुल्फिकरगति कहते हैं यह दिलकी कम्जोरी सूचित करतीहै प्राय: यह शांचसमय होतीहै	जिस नाडीका टंकोरदेना जिस वक्तमें देनाउचितहै उससे सुबंही ज्यादा टंकोर देदेवे श्वासाधिक्य निर्वलतामें होतीहै।

यूनानी भाषामें नाडीको नब्ज कहनेका कारण यह है कि, नब्जका अर्थ शिराका तडफना है वह प्रत्येक मनुष्यकी प्रकृति, देश, काल अवस्थाओंके भेदसे समान नहीं होता, कुछ न कुछ भेद रहताही है । वैद्य जिस स्वस्थ मनुष्यकी नाडी अनेक बार देखी होगी यदि फिर उसकी रोगावस्थामें देखेगा तो उसको उसकी नाडीका ज्ञान यथार्थ होगा, अन्यथा ज्ञान होना अतिदुस्तर है ।

नाडी देखनेका नियम ।

नाडी देखनेवालेको वा दिखानेवालेको उचित है कि, किसी वस्तुका हाथको सहारा न देवे, न कोई वस्तु पकड रखी हो, तथा रोगीके हाथमें पट्टी आदि बन्धनादिक न होवे । यद्यपि बहुतसे वैद्य पहुंचे, कनपटी, गुदा, टकने आदि अनेक स्थानकी नाडी देखते हैं परन्तु बहुधा हाथकी देखनेका यह कारण है कि, अन्य नाडी सब थोडी थोडी प्रकट हैं शेष हाड मांसके प्रवेश होनेके कारण अस्त होरहती हैं । उस जगह उंगलियोंको स्पर्श प्रतीत नहीं हो सकता परन्तु हाथकी नाडी विशद रहती है अतएव इसपर उंगली उत्तम रीतिसे धरी जाती हैं । परन्तु मुख्य कारण इसका यह है कि किसी स्त्रीकी नाडी देखनेकी आवश्यकता होवे तो वह अन्यान्य अंगोंकी नाडी लज्जावश नहीं दिखा सकती, परन्तु हाथके दिखानेमें किसीकोभी संकोच नहीं होता अतएव सर्वत्र हाथकी नाडी देखना प्रसिद्ध है ।

अब कहते हैं कि यूनानी वैद्य नाडीकी गति दो प्रकारकी वर्णन करते हैं । प्रथम इम्बिसात दूसरी इन्किवाज ।

इम्बिसात (वाह्यगति)	इन्किवाज (आभ्यंतरगति)
इम्बिसात उस गतिको कहते हैं जब नाडी बाहर आकर उंगलियोंको स्पर्श करती है ।	इन्किवाज उस गतिका कहते हैं कि जब नाडी उंगलियोंका स्पर्श कर भीतरको प्रवेश करती है ।

दोषः खिल्त इति प्रोक्तः स चतुर्धा निरूप्यते ।
सौदा सफरा तथा वल्गम् तुरीये खून उच्यते ॥ २२ ॥

यूनानीमें दोष शब्दको खिल्त कहते हैं वह चार प्रकारका है । जैसे सौदा-(वात), सफरा (पित्त), वल्गम (कफ) और चौथा दोष खून (रुधिर) है परन्तु अपने शास्त्रमें दूष्य होनेसे इसको दोष नहीं माना । यह शारीरकमें हम लिख आये हैं ॥ २२ ॥

प्रत्येक दोषमें दो दो गुण ।

तत्र सौदा धरातत्त्वं रूक्षं शीतं स्वभावतः ।
पित्तमग्नेः स्वरूपं तु सफरा रूक्ष उष्णकम् ॥ २३ ॥

बल्गं वारिस्वरूपं स्यात्स कफः स्निग्धशीतलः ।
अस्रं वायुः खून इति स्निग्धोष्णं तेषु तद्वरम् ॥ २४ ॥

तहां सौदा अर्थात् वातमें पृथ्वीतत्त्व अधिक है अतएव वात स्वभावसेही रूक्ष और शीतल है, पित्तमें अग्नितत्त्व विशेष है अत एव सफरा (पित्त) रूक्ष और उष्ण है, बल्गम् (कफ) में जलतत्त्व अधिक होनेसे स्निग्ध शीतल गुणवाला है, खून (रुधिर) में वायुतत्त्व अधिक होनेसे स्निग्ध और उष्ण है अत एव अन्य दोषोंकी अपेक्षा यह रुधिर श्रेष्ठ है ॥ २३ ॥ २४ ॥

इस प्रकार दोषोंके गुणोंका विचार कर उक्त नाडीके लक्षणोंसे मिलाकर द्वन्द्वज गुण अपनी बुद्धिसे कल्पना करे ।

जैसे जो नाडी दीर्घ और स्थूल हो उसको गरमतर गुणाविशिष्ट होनेसे रुधिरकी जाननी, और जो नाडी दीर्घ [illegible] पतली होवे उसमें गरम और खुष्क गुण होनेसे पित्तकी जाननी । जो ह्रस्व और मोटी हो वह सरद और तर गुणवाली होनेसे कफकी जाननी और जो नाडी ह्रस्व और पतली होवे उसमें सरद और खुष्क गुण होनेसे वातकी नाडी जाननी चाहिये ।

इम्बसातके भेद ।

तवील (दीर्घाकार)			अरीज (स्थूलाकार)			उमक (बहिर्गत्याकार)		
मुअदिल समान ३	कसीर ह्रस्व २	तवील १ दीर्घ	अरीज स्थूल	ज्येयकवा जीक (कृश)	मुअदिल समान	मुशरिफ उमक बहिर्गत	मुन्खफिज अंतर्गत	मुअदिल समान
यदि नाडी चार अंगुलसे कुछभी न्यूनाधिक नहो किंतु सम हो तो उसप्राणीके शरदी गरमी समान जाननी ।	और चार अंगुलसे न्यून होवे तो वो शरदीके लक्षण वाली जाननी अर्थात् ऐसे पुरुषके सरदी जानना ।	जो नाडी पहुँचेसे भुजाके प्रति चार अंगुलसे अधिक लंबी प्रतीतहो तो वो गरमीके लक्षण वाली जाननी ।	यदि नाडी तर्जनी उंगलीसे लेकर कनिष्ठिका पर्यंत स्थूल प्रतीत होवे तो वो तर अर्थात् जैसे रुधिर और कफमें ।	जो नाडी पतली प्रतीतहोवे उस्को रूक्ष अर्थात् खुष्क कहते हैं । जैसे पित्त और वात कोपमें होतीहै ।	जो नाडी न स्थूलहो न कृशहोवे किंतु समानहो उसमें तरी ठीकठीक होतीहै ।	जो नाडी अत्यंत उछलकर बलपूर्वक उंगलियोंको स्पर्शकरे उसमें गरमीकी आधिक्यता प्रतीत होतीहै ।	जो नाडी हद्दसे कमउंची उठे अर्थात् धीरे उंगलियोंको स्पर्श-करे उसमें गरमीकी न्यूनता प्रतीत होतीहै । किंतु सरदीको द्योतन करतीहै ।	जो नाडी न बहुत उभरी हुई हो न बिलकुल दबी हुई हो किंतु समानहो इसमें गरमी ठीक होतीहै

अब जानना चाहिये कि, हिकमतमें दोष चार प्रकारके कहे हैं । यथा-

अन्यचक्र ।

अंक	विषय	नाम	यूनानी नाम	विवरण
१	नाडीका बलाबल	सबल	शीघ्रचारिणी	जो नाडी उंगलियोंके मांसमें जोरसे धक्कादेकर ऊंची उठावे तो हृदयकी प्रबलता जानें।
		दुर्बल	मंदचारी	और यदि नाडी उंगलियोंको स्पर्शकर दवजावे तो हृदयकी दुर्बलता जाननी ।
		मोतादिल	समता	और जो नाडी न बहुत जोरसे लगे न अत्यन्त धीरे लगे वो दिलकी समताको प्रगट करती है ।
२	नाडीका विलंब होना	सरी	समता	जो नाडी शीघ्र आवा गमनकरे वो देहमें गरमीकी विशेषता द्योतन करतीहै ।
		वती	मंदचारी	और धीरे धीरे आवागमनकरे वो देहमें सरदीकी आधिक्यता द्योतन करतीहै ।
		मोअदिल	शीघ्रचारी	जो नाडी मध्यम चालसे आवागमन करे वो सरदी गरमीकी समानता प्रगट करतीहै ।
३	आकृति	मृदु	नरम	जो नाडी दावनेसे सहज दबजावे उसको तर स्निग्ध कहते हैं, इसे फारसीमें लीन कहते हैं ।
		कठिन	सख्त	और जो दवानेसे न दवे वह खुश्क जाननी उसको फारसीमें सल्व कहते हैं ।
		सम	मोंअद्दिल	जिसमें मध्यम गुणहो अर्थात् न बहुत कठोर न बहुत नम्र वो मोतदिल जाननी ।
४	प्रमाण	रुधिरपूर्ण	मुम्तलिा	जो नाडी मोटी और शीघ्र चलतीहो वह रुधिर और मवादसे भरीहुई जानना अथवा जीवसे पूर्णजा०
		स्वल्परुधिर	खाली	और जो नाडी खाली होती है वो मंद और पतली होती है उसमें थोडा रुधिर और मवाद जानना ।
		समता	मोद्दिल	और जब नाडी न भरीहो न खालीहो वो सामान कहलाती है इसमें मवाद ठीक होता है ।
५	स्पर्श	उष्ण	गरम	जिस समय नाडीका स्पर्श गरम प्रतीतहो तव रुधिरमें ज्वर वा मरमी जानना ।
		शीत	सरद	और जिस समय स्पर्शमें शीतलता प्रतीतहो तव रुधिरमें सरदीकी आधिक्यता जाने ।
		सम	मोअद्दिल	जिस समय नाडीमें शीत उष्णता समान प्रतीतहो उसको सम कहते हैं ।
६	साध्यासाध्य	पूर्वसदृश	उस्तवा	जो नाडी कमसे कम् ३५ बार टंकोर देके ठहर जावे वो साध्यहै ।
		विपरीत	इख्तिलाप	जो ३५ बार टंकोर देनेमें कई बार टूटजावे अर्थात् ठहर कर चले वो असाध्य है ।
		समता	मोअदिल	जो वहुतवार न टूटे किन्तु अल्पबार टूटकर फिर शीघ्र चलने लगे उसको याप्य कहते हैं ।
७	स्थिति	अत्यंत	मुतवातर	जो नाडी उंगलियोंको स्पर्शकरके शीघ्र नीचे चलीजावे वो निर्वल जाननी ।
		धैर्य	मुतफावत	जो नाडी उंगलियोंको कुछकालतक स्पर्शकरे उसको बलवान् कहते हैं ।
		समता	मोद्दिल	और जो सामान रीतिसे उंगलियोंका स्पर्शकरे उसको समान स्थितिवाली जाननी ।

प्रत्येक प्रस्तारके नौ नौ भेद आते हैं। लंबाव चौडाई और गहराई इन तीनोंके प्रमाणको हकीम लोग कुतर कहते हैं।

उन दो तीन कुतरोंको एकत्र करो अर्थात् प्रस्तार करो तो दो प्रस्तार सत्ताईस सत्ताईसके होते हैं जैसे आगेके दोनों चक्रोंमें लिखे हैं। दोनों प्रस्तार करनेकी यह रीति है कि, तीन प्रकारके लंबावको तीन प्रकारोंकी चौडाईके साथ गुण देवे तो नौ होवेगी, इसी प्रकार लंबाई और गहराइयोंको तथा चौडाई और गहराईके तीन तीन प्रकारोंके साथ मिलनेसे नौ नौ भेद होते हैं। इस प्रकार तीनों सत्ताईसे सत्ताईस भेद होते हैं इसका उदाहरण आगे चक्रोंसे समझना चाहिये। इस गुणनका फारसीवाले सनाई कहते हैं।

नाडियोंका प्रस्तारचक्र.																	
सनाई (द्विगुण)									सलासी (त्रिगुण)								
द स	द क	द य	ह स	ह क	ह य	य स	य क	य य	द स व	द स अं	द स य	द क व	द क अं	द क य	द य व	द य अं	द य य
द व	द अं	द य	ह व	ह अं	ह य	य व	य अं	य य	ह स व	ह स अं	ह स य	ह क व	ह क अं	ह क य	ह य व	ह य अं	ह य य
स व	स अं	स य	क व	क अं	क य	य व	य अं	य य	य स व	य स अं	य स य	य क व	य क अं	य क य	य य व	य य अं	य य य

इन दोनों चक्रोंमें जो अक्षर हैं उनमेंसे द से दीर्घ, ह से ह्रस्व और य से यथार्थ कहिये समान जानना उसी प्रकार स से स्थूल, क से कृश, व से बहिर्गत, अं से अंतर्गतकी समस्या जान लेन चाहिये॥

इति श्रीमाथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण संकलिते नाडीदर्पणे चतुर्थावलोकः ॥ ४ ॥

पञ्चमावलोकः ।

PULSE EXAMINATION.

अथैंग्लण्डीयमतेन नाडीपरीक्षा ।

पल्ससंज्ञा और उसका भेद ।

ऐंग्लण्डीयभाषायां नाडी पल्सेति शब्दिता ।
तस्याः परोक्षापरोक्षभेदेन द्विविधा गतिः ॥ १ ॥
द्रष्टुर्याऽङ्गुलिसंस्पर्शं परोक्षा न करोति सा ।
करोति या साऽपरोक्षाङ्गुलिस्पर्शं च पश्यतः ॥ २ ॥

ऐंग्लेंड अर्थात् अंगरेजीमें नाडीको पल्स कहते हैं। वह दो प्रकारकी है—एक परोक्ष और दूसरी अपरोक्ष। तहां जो नाडी देखनेवालेकी उंगलियोंका स्पर्श न करे वह परोक्ष कहाती हैं और जो उंगलियोंका स्पर्श करे वह अपरोक्षा अर्थात् प्रत्यक्ष नाडी कहती है १॥२

उठने बैठने आदिमें नाडी विचार ।

उत्थानापेक्षया पुंस आसने तदपेक्षया ।
शयने नाडिकावेगो मन्दीभवति नानृतम् ॥ ३ ॥
सायन्तनाद्धि समयात्प्रातःकालेऽधिका गतेः ।
वेगसंख्या भवेन्निद्राकाले ह्रासं च गच्छति ॥ ४ ॥

खडे होनेकी अपेक्षा (बनिस्वत) बैठनेमें और बैठनेकी अपेक्षा सोनेमें नाडीकी गति घट जाती है उसी प्रकार सायंकालकी अपेक्षा प्रातःकालमें नाडीकी गति बढ जाती है और निद्रामें नाडीकी संख्या घट जाती है ॥ ३ ॥ ४ ॥

भोजनस्याथ समये वेगसंख्या विवर्धते ।
अहिफेनसुरादीनामुष्णानां यदि भोजनम् ॥ ५ ॥
बुभुक्षावसरे नाडीगतेर्वेगो ह्रसत्यलम् ।
एषा नाडीगतेर्वेगचर्या सामान्यतो मता ॥ ६ ॥

यदि अफीम मद्य आदि गरम वस्तु खाय तो उस गरम भोजनके कारण नाडीकी संख्या बढ जाती है और अत्यन्त शीतल वस्तु खानेसे नाडीकी संख्या न्यून होती है, यह अर्थांशसे जाना जाता है। उसी प्रकार भोजनके समय नाडीका वेग मन्द हो जाता है यह नाडीकी सामान्य गतिसंख्या कही है ॥ ५ ॥ ६ ॥

नाडीकी व्यवस्था जाननेके लिये वैद्यको प्रथम इतनी वस्तुओंका जानना अति आवश्यक है । जैसे प्रथम नाडी और देखनेकी विधि, दूसरे आरोग्यावस्थाकी नाडी, तीसरे रोगावस्थाकी नाडी और चतुर्थ नाडी देखनेका यंत्र ।

१ नाडी देखनेकी विधि–नाडी देखनेके जो नियम वैद्योंने निश्चित कर रक्खे हैं यदि उनके अनुसार न दखी जावे तो हम जानते हैं कि नाडीका यथार्थज्ञान होना अति असंभव है। अत एव अब उन नियमोंका वर्णन करते हैं।

प्रथम–वैद्य या रोगी कहींसे चलकर आया हो तो उचित है कि थोडी देर विश्राम लेकर फिर नाडी देखे या दिखावे तथा परिश्रमकी अवस्थामें और शोधक विचारके समय भी नाडी न देखे ऐसे समयकी नाडी विश्वासयोग्य नहीं है।

दूसरे–रोगीको बिठलाकर या लिटाकर यदि कोई आवश्यकता होय तो खड़ा करके रेडीअल आर्टेरी Radial Artery जो पहुंचेमें अंगूठेकी जड़में त्वचाके भीतर है उसपर बराबर तीन उंगली रखकर नाडी देखना, परन्तु कभी पहुंचेकी देखना असम्भव होय तो अन्योन्य स्थानकी देखे, जैसे मस्तकसम्बन्धी रोगमें कनपटीकी नाडी तथा गठियामें पहुंचेपर पट्टी बन्धी हो अथवा दोनों हाथ कट गये हों तो प्रचण्ड (बाजू) नाडी देखे और कभी पैरमें टकनेके नीचे भीतरकी तरफ पोस्टी-रीअल टिबिअल Posterial Tibial नाडीको देखते हैं।

तीसरे–वैद्यको रोगीके दोनों हाथोंकी नाडी देखनी चाहिये. इसका यह कारण है कि, ऐसा देखा गया है कि एक ओरकी नाडी दूसरी नाडीसे बडी होती है और यह भी स्मरण रखना कि दहने हाथकी वाम हाथसे और वाम हाथकी दहने हाथसे नाडी देखे इसमें सरलता रहती है।

चतुर्थ–स्त्रीकी नाडी दहने हाथकी अपेक्षा वाम हाथकी उत्तम रीतिसे विदित होती है, इससे प्रतीत होता है कि, स्त्रियोंकी बांए हाथकी नाडी कुछ बडी होती है। हिंदुस्थानी वैद्य जो स्त्रीके वाम करकी नाडी देखते हैं कदाचित् उसका यही कारण न होय।

पांचवें–नाडीकी स्पन्दनसंख्या अर्थात् शीघ्रगति और मन्दगति जाननेके पश्चात् उसके बलाबल जाननेको कुछ दवाकर फिर ढीली छोड़ देवे जिससे यह प्रतीत हो जावे कि नाडी दबानेसे कितनी दबती है? परन्तु इतनी न दबावे कि जिससे रुधिरका भ्रमण बन्द हो जावे, केवल इतनी दाबे कि, जिससे नाडीकी तड़फ प्रतीत होती रहे।

छठे–धैर्यरहित पुरुषोंकी या अत्यन्त डरपोककी नाडी देखे तो उसका ध्यान वार्ता-लापमें लगाय लेवे, इसका यह कारण है कि ऐसे मनुष्योंके तुच्छ कारणसे हृदयकी खटक न्यून हो जाती है अत एव नाडीका वृत्तान्त ठीक २ निश्चय नहीं होता है।

अब कहते हैं कि रुदन करनेसे और मचलनेसे बालकोंके पहुंचेकी नाडीका देखना कठिन हैं इस वास्ते उनको गोदीमें बैठाल खिलौने आदिका लोभ देके उनके छातीपर कान लगाकर हृदयकी धडधडाहटका निश्चय करना। यदि नाडीका ही देखना जरूरी होवे तो निद्रावस्थानमें देखनी चाहिये।

सातवें–नाडी देखनेके समय यह भी अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि, नाडीपर किसी प्रकारका दबाव न हो जैसे बन्ध अथवा तंगी या रसौली वा घोटू आदिका सहारा न हो। क्षणिक और मानसिक रोगोंमें अनेक वार नाडी देखनी चाहिये कि जिससे रोग भले प्रकार समझमें आ जावे।

आरोग्यावस्थाकी नाडी।

मध्यम श्रेणीके युवापुरुषोंकी नाडी आरोग्यावस्थामें साथ प्रबन्धके कुछ देखनेवाली और कुछ भरी हुई होती है। परन्तु चिह्न भेद और अवस्था तथा स्वभाव आदि भेदसे नाडीमें अन्तर हो जाता है और बालिकाओंकी नाडी पुरुषोंकी अपेक्षा कुछ छोटी होती है और शीघ्रगामिनी होती है । दम्भी प्रकृतिवालोंकी नाडी भरी हुई कठोर और शीघ्रगामिनी होती है। कोमलस्वभाववाले मनुष्योंकी नाडी धीरे २ चले है और नम्र होती है, वृद्धावस्थामें कठोर होती है।

नाडीकी स्पन्द संख्या (जिनका निश्चय करना नाडीकी और अवस्थाओंसे सुगम है) सदैव हृत्पद्मके संकुचित खटकेके समान होती है। इससे कदापि अधिक नहीं होती, परन्तु अपस्मार आदि चित्तके रोग और मूर्च्छा आदिमें एक दो गति न्यून हो जाती हैं।

छोटे बालककी नाडीकी गति अधिक होती है, फिर जैसे २ अवस्थाकी वृद्धि होती है उसी प्रकार क्रमसे नाडीकी स्पन्दनसंख्या न्यून होती जाती हैं परन्तु वृद्धावस्थामें फिर कुछ बढती है।

अवस्थानुसार नाडीकी गति.	
गतिप्रमाण	अवस्था
१४०	सद्यःप्रसूत बालककी
१२०से३० तक	दूध पीनेवाले बालककी
१००	५वर्षसे ६ वष तकके बालककी
९०	१५ वर्षतकवालेनवयुवावस्थामें
७० से ७५	३५वर्षतक अर्थात् युवावस्थामें
७०	३५ वर्षसे लेकर ५० वर्षवालोंकी अर्थात् वृद्धावस्थामें
७५ से ८० तक	अतिवृद्धावस्थामें

इस चक्रमें जो नाडीकी संख्या है वह आरोग्य पुरुषके लिये ठीक है। परन्तु रोगावस्थायें न्यूनाधिक हो जाती है। यदि नैरोग्यपुरुषकी नाडीकी गति १ मिनिटमें ७२ वार हो और स्त्रीकी ८२ वार होय तो ठीक जाननी, स्त्रीकी १० गति पुरुषसे सदैव अधिक होती है और गर्मी, सूजन, ज्वर, अतिदुर्बलता, जागना, प्लेथोगके प्रथम दर्जासे लानरुधिर, क्रोध-जोश आदिमें ७० या अस्सीसे १०० या १२० परञ्च २०० तक नाडीकी गतिसंख्या प्रत्येक मिनिटमें हो जाती है । एवं सरदी, आलस्य, निद्रा, कुछ थकावट, क्षुधामें

हवाके दबावमें, बेफिकिरीमें इत्यादि कारणोंसे नाडीकी गति ऐसी न्यून होजाती है कि, प्रत्येक मिनिटमें ६० या ३५ तकही रहजाती है ।

रोगावस्थाकी नाडी ।

रोगावस्थामें नाडीकी गति संख्यामें और अन्य अन्य लक्षणोंमें विशेष अन्तर होता है जैसे आगे लिखते हैं ।

ज्वर, प्रदर, वमन, विरेचन, बुहरान इत्यादि रोगोंमें नाडी इतनी शीघ्र चलती है कि गणना करना कठिन होजाता है । यदि ज्वरावस्थामें अकस्मात् नाडी मन्द पड-जावे तथा उसके साथ अन्य अशुभ लक्षणोंकी आधिक्यता होवे तो उस प्राणीके मस्तकमें किसी प्रकारके विघ्नसे सत्ता या पक्षाघात होकर रोगीके मरनेका भय रहता है

नाडीकी इंग्रेजी संज्ञा ।

आनन्दादितरावस्था स्वानन्दापेक्षया गतेः ।
वेगसंख्या वर्द्धते सा नाडी फ्रीकेंटशब्दिता ॥ १ ॥

गति संख्याके सिवाय नाडीमें जो वृत्तान्त निश्चय होता है, उसको आगे कहते हैं । आनन्दकी अपेक्षा जिस नाडीकी संख्या अधिक वेगवान् हो उसको इंग्रेजीमें Frequent प्रीकेंट कहते हैं ॥ १ ॥

आनन्दादितरावस्था स्वानन्दापेक्षया गतेः ।
वेगसंख्या ह्रसति सा नाडीन्फ्रीकेंटशब्दिता ॥ २ ॥

जिस नाडीमें आनन्दकी अपेक्षा स्पन्दनसंख्या न्यून होय उस मन्दचारिणी नाडीको इंग्रजीमें Infrequent इन्फ्रीकेंट कहते हैं ॥ २ ॥

चिरकालधृतायां च नाड्यां संख्या न वर्द्धते ।
न वा ह्रसति वेगस्य सा च रेग्यूलराभिधा ॥ ३ ॥

जिस नाडीपर बहुत देरतक हाथ धरनेपरभी कुछ न्यूनाधिक्य प्रतीत न होय उस नाडीको इंग्रेजीमें Regular रेग्यूलर कहते हैं ॥ ३ ॥

चिरकालधृतायां च नाड्यां संख्या विवर्द्धते ।
मन्दीभवति चावस्था सेरैग्यूलरशब्दिता ॥ ४ ॥

जो नाडीमें बहुत देर हाथ रखनेसे कुछ न्यूनाधिक्य प्रतीत होय उस अवस्थाको डाक्टरलोग Irregular इरग्यूलर कहते हैं ॥ ४ ॥

सकृदंगुलिसंस्पर्शादन्तर्धानं तु गच्छति ।
इन्टर्मिटेंटाभिधा साऽसृक्कफाशयदूषिणी ॥ ५ ॥

जो नाडी एक बार उंगलियोंको स्पर्श कर छिप जावे, वह रुधिर और कफा-शयको दूषितकर्ता हृदयसम्बन्धी व्याधिको उत्पन्न करे। इसकी इंगलंडीयवैद्य Inter mittent इन्टर्मिटेंट कहते हैं ॥ ५ ॥

यदा रक्तेन पूर्णत्वमापन्ना नाडिका भवेत्।
तदा फुलशब्दविख्याताथवा लार्जेति विश्रुता ॥ ६ ॥

जिस समय नाडी रुधिरसे परिपूर्ण होती है उसका डाक्टलोग Full फुल यह Large लार्ज ऐसा कहते हैं ॥ ६ ॥

यस्यां हृत्कमलोच्छ्वासाद्रक्तमल्पं वहेत्तु सा।
रिक्ता नाडी स्मालसंज्ञा समाख्याताङ्ग्लभाषया ॥ ७ ॥

जिस समय हृदयसे रुधिर अल्प प्रकट होय उस रिक्त नाडीको पाश्चात्य वैद्य Small स्माल कहते हैं ॥ ७ ॥

या वै गुणवदातन्वी नाडी क्षीणत्वशंसिनी।
रक्ताल्पतां द्योतयन्ती सा थ्रेडीपल्ससंज्ञिता ॥ ८ ॥

जो नाडी डोरेके माफिक बहुत बारीक प्रतीत होय वह क्षीणता और रक्तकी अल्पताके प्रकाश करनेवालीको Thready Pulse थ्रेडीपल्स कहते हैं ॥ ८ ॥

अंगुलीभिर्यदा नाडी पीडितापि न नम्रताम्।
व्रजेत्तदातिरूक्षत्वद्योतिनी हार्डशब्दिता ॥ ९ ॥

जो नाडी उंगलियोंके पीडनेसे भी अर्थात् दबानेसेभी नम्र न होवे उस रूक्षताको द्योतन करती हुई नाडीको डाक्टरजन Hard हार्ड ऐसा कहते हैं ॥ ९ ॥

अंगुलीभिर्यदा नाडी पीडिता नम्रतां व्रजेत्।
सार्द्रत्वद्योतिनी मृद्वी साफ्टशब्देन शब्दिता ॥ १० ॥

जब नाडी उंगलियोंके दबानेसे दब जावे उस मृदु नाडीको Soft साफ्ट ऐसा कहते हैं, यह आर्द्रत्वको द्योतन करती है ॥ १० ॥

प्रतिस्पन्दं शीघ्रतायां संख्या यस्या न वर्द्धते।
सकृच्छैघ्र्यधरातूर्णगा नाडी क्विकशब्दिता ॥ ११ ॥

जिस नाडीमेंकी प्रत्येक तडफ शीघ्र भी होय परन्तु स्पन्दनसंख्या न बढे किंतु एक वार ही जल्दी करे उस तूर्णगामिनी नाडीको ऐंग्लंडीय वैद्य Quick क्विक ऐसा कहते हैं, यह निर्वलताको द्योतन करती है ॥ ११ ॥

यस्या मन्दा गतिर्या च नाडी पूर्णा भवेत्तु सा।
स्लोशब्दशब्दिता ज्ञेया रक्तकोपप्रकाशिनी ॥ १२ ॥

जो नाडी मंदगति हो और परिपूर्ण हो वह रुधिरकोपके प्रकाश करनेवाली नाडीको ऐंग्लंडीय वैद्य Slow स्लो कहते हैं ॥ १२ ॥

नाडियोंकी व्यवस्था ।	संस्कृतनाम	इंग्रेजीमें नाडीके नाम	इंग्रजी नाम	सं
हृदयके खटकाके संख्यानुसार नाडी दोप्रकारकी है पहिली फ्रीकेन्ट इसमें आरोग्य अवस्थाकी अपेक्षा गतिसंख्या अधिक होतीहैं ।	शीघ्रचारि०	Friquent	फ्रिकेंट	१
दूसरी इन्फ्रीकेंट इसकी दशा फ्रीकेंटसे विपरीत होती है यह स्त्रियोंके वातगुल्म रोगमें होती है ।	मंदगामिनी	Infriquent	इन्फ्रिकेट	२
हृदयकी गतिके प्रबन्धानुसार भी नाडीकी दोअवस्था पाई जाती हैं एक रेग्यूलर, नाडीन्में क्रमानुसार रुधिर जानेवाली नाडीको रेग्यूलर कहतेहैं इसपर हाथ रखनेसे गति एकसी मालूमहो और कभी बीचमें अंतर नहीं पडता ।	सावधानता सूचक	Regulars	रेग्यूलेर्स	३
दूसरी इररेग्यूलर अर्थात् नाडीन्में क्रमके विपरीत रुधिर जाय इसपर हाथ रखनेसे गति एकसी प्रतीत नहीं होती और बीचमें अंतर पड जाता है रोगवस्थामें नाडीका सप्रबंधित अर्थात् क्रमपूर्वक चलना अच्छा है ।	असावधानता सूचक	Irregulars	इररेग्यूलर्स	४
जिस नाडीके तडफ होनेमें जितना काल जाता है उससे अधिक होजाय अर्थात् दूसरी गतिकाभी कालव्यतीत होजावे उसको इंटरमिटेंट कहते हैं परन्तु गतिके भेदसे यह दोप्रकारकी है एक रेग्युलर इन्टर्मिटेंट और दूसरी इररैग्यूलर इन्टर्मिटेंट है ।	सांतरिक	Intermittent	इंटरमिटेंट	५
मस्तकके सूजनेमें अन्यकारणोंसे नाडीमें अधिक रुधिर पहुंचे और उंगलियोंके नीचे नाडीका उत्प्लवन अधिक प्रतीतहो तो उसनाडीको फुल या लार्ज कहतेहैं यह अधिक रुधिर वृद्धिमें अथवा कठोररोगोंमें प्रतीत होती है ।	परिपूर्ण	Full वा Large	फुलया लार्ज	६
जो नाडी फुल लार्जके विपरीतहो अर्थात् नाडियोंमें अल्प रुधिर पहुंचे और नाडीका उत्प्लवन उंगलियोंको थोडा प्रतीतहो उसनाडीको स्माल अर्थात् बारीक नाडी कहते हैं ।	रिक्त	Esmal	स्माल	७
जब नाडी अत्यन्त सूक्ष्मसूतके समानहो तो उसको इंग्रेजीमें थ्रेडीपल्स कहते हैं यह रुधिरकी न्यूनावस्था अथवा दुर्बलतामें देखी जाती है ।	सूक्ष्मवर	Thready Pulse	थ्रेडी पल्स	८
नाडीकी दिवारकी लचकके तुल्यनाडीकी दोगति होतीहै एक हार्ड अर्थात् कठोर इसे किंचिन्मात्र भी दबानेसे उंगलियोंको कठोरता प्रतीत होतीहै यह नाडीकी अधिक लचकके कारण होती है ।	कठिन	Hard	हार्ड	९
द्वितीय साफ्ट या नम्र जिसकी दशा हार्ड नाडीके विपरीत होती है यह नाडीके अनुरोध (नाडीकी दिवार) की लचकसे और देहके निर्बलतामें पाई जाती है ।	मृदु	Soft	सॉफ्ट	१०
नाडीकी गतिमें जो समय व्यतीत होताहै उसके अनुसार नाडी द्विविध होतीहै एक क्विक् अर्थात् शीघ्रचरिणी नाडी प्रत्येक गति शीघ्रही परन्तु एक अथवा मानसिक रोगोंमें जिसमें स्वभाव दुष्टहो उनमें पाई जातीहै ।	शीघ्र गामिनी	Quick	क्विक्	११
जो क्विक् नाडीके विपरीतहो अर्थात् सुस्तहो उसको स्लो नाडी कहते हैं ।	धीरगामिनी	Slow	स्लो	१२

खूनकी गतिके कारण नाडीके अनेक भेद हैं । जैसे Aorta अयोर्टा Water Hammer वाटरहेमर Bounding बौंडिंग Wavering वेवरिंग Thrilling Pulse थ्रिलिंग पल्स Redouble रिडबल Diachrotic डाईक्रोटिक और इसीटेट आदि हैं । जो लहरके समान उंगलियोंको लगकर हट जावे उसको Jerking जर्किंग अर्थात् झटकेदार नाडी कहते हैं । किवारोंकी रिगडके माफिक अयोर्टा होती है । उछलने-वाली नाडीको बौंडिंग कहते हैं, जो नाडी कांपती हो उसको थ्रिलिङ्गपल्स कहते हैं, इसी प्रकार अन्य सब नाडियोंकी गतिको बुद्धिमान् डाक्टरद्वारा और उनके ग्रंथोंसे जाननी । इस जगह ग्रंथविस्तारके भयसे नहीं लिखी ।

नाडीदर्शक कथन यंत्र ।

नाडी देखनेके लिये अंग्रेजी डाक्टरोंने एक यंत्र निर्माण किया है। उसको अंग्रेजी बोलीमें स्फिग्मोग्राफ Sphygmograph कहते हैं इसमें अनेक टुकडे होते हैं। विना दृष्टिगोचर हुए उनका समझना मुशकिल है इसलिये उसके आवश्यक विभागोंका कुछ इस जगह वर्णन करते हैं ।

अ–पटलीके चलाने और रोकनेकी खूटी ।

क–ताली लगानेकी कमानी ।

च–नाडीके कम अधिक दबाव करनेका गोलाकार चक्रविशेष ।

ट–कज्जलसे रंजित कागज धरनेकी जगह ।

त–चिह्नित होनेके पश्चात् जो कागज निकलता है ।

प–जिनसे कागजपर चिह्न होते हैं वह सूई ।

इस यंत्रके लगानेकी यह विधि है कि, जब हाथी दांतवाले स्थानको रेडियलपर धरकर यंत्रको काममें लाते हैं तो नाडीकी तडफ कमानीको लगती है । जिसके द्वारा सूईसे कागजपर लहरदार रेखा प्रगट होती है कि जिससे हृदयके धडकनेका हाल और रुधिरभ्रमणका वृत्तान्त उत्तम रीतिसे प्रतीत होता है । प्रत्येक लहरमें एक रेखा उठनेकी होती है। फिर मुडनेकी ओर फिर उतरनेकी तथा उतरनेकी लहरमें दो लहर प्रगट होती हैं इन लहरोंका भी चिह्न स्फिग्मोग्राफ यन्त्रमें लिखा है सो देख लेना ।

खडी रेखा हृदयसे संकोच होनेसे होती है और मुडनका कोना नाडीयोंके किसी प्रकार संकोचसे होता है और जिस समय हृदयके संकोचसे रुधिर अयोर्टामें पहुँचता है पहिली रेखा प्रगट होती है फिर अयोर्टाके किंवाड बन्द होनेसे दूसरी लहर खांचे तक बनता है। अयोर्टाके सुकडनेके पीछे रुधिर आगेको बढजाता है और दूसरी लहर परिपूर्ण होकर एक बार हृदयके खटककी चिह्नित रेखा सम्पूर्ण होजाती है।

इति श्रीमाथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण संकलिते नाडीदर्पणे ऐंग्लण्डीयनाडी-परीक्षावर्णनं नाम पञ्चमावलोकः ॥ ५ ॥

आयुर्वेद सम्बन्धी हमारे कुछ विशिष्ट प्रकाशन

अष्टांग हृदय (वाग्भट्ट) सूत्रस्थान–वाग्भट्टकृत मूल, अरुणदत्त कृत सर्वांग सुन्दरा, चन्दनदत्त कृत पदार्थ चन्द्रिका, हेमाद्रि आयुर्वेद रसायन, कठिनस्थल पर राजवैद्य वैद्यरत्न पं० रामप्रसादजीकृत टिप्पणी सहित

अमृतसागर–(हिन्दी में) इसमें सर्व रोगों के वर्णन और यत्न हैं। इसके द्वारा बिना गुरु वैद्य हो सकते हैं।

अनुपान दर्पण–हिन्दीटीका सहित । इसमें रस धातु बनाने की क्रिया और रोगानुसार औषधियों के अनुपान वर्णित हैं।

आयुर्वेद सूत्र–हिन्दीटीका सहित ।

कोकसार वैद्यक–नारायणप्रसाद मिश्रकृत तथा इच्छागिरिजीकृत काम कलासार सहित। वात्स्यायन कामसूत्र आदि ग्रन्थों में प्रतिपादित विषयों को सरलता से समझने के लिये उक्त ग्रन्थ दो भागों में बनाया गया है। पूर्व भाग में स्त्री पुरुषों के अनेक रोगों के निवारणार्थ उत्तम साधन बताये गये हैं, ईक्षागिरीजी ने कामशास्त्र तथा वैद्यक के अनुभव से कोकशास्त्रों में भी नहीं पाये जाने वाले साधनों का विशद रूप से संग्रह किया है।

नपुंसकामृतार्णव–वैद्यरत्न पं० रामप्रसादजी राजवैद्यकृत हिन्दी टीका सहित। इसमें नपुंसकोपयोगी नाना प्रकार के तेल, लेप, घृत आदि वाजीकरण और औषधियां सर्वोत्तम हैं।

वैद्यक रसराज महोदधि–चारों भाग की एक जिल्द

चरक संहिता–वैद्यरत्न पं० राप्रसाद राजवैद्यकृत हिन्दीटीका एवं विद्यालंकार आयुर्वेदाचार्य पं० शिवशर्माजी द्वारा संशोधित। चरक के आठों स्थान एक से एक अपूर्व होने पर भी 'चिकित्सास्थान' तो अद्वितीय ही है। प्रथम भाग पृष्ठसंख्या ९१६ तथा द्वितीय भाग पृष्ठसंख्या ११३६ है। सुनहरे अक्षरों से मुद्रित सुंदर प्लास्टिक कवर से मंडित संपूर्ण दो जिल्दों में है।

भावप्रकाश–तीनो खण्ड भावमिश्र संग्रहीत। हिन्दीटीकासहित। हिन्दीटीकाकार गो० वा० लालाशालिग्रामजी। संशोधक–डा० कान्तिनारायणजी मिश्र आयुर्वेद विशारद। ए० एल० आई० एम० (मद्रास) डाइरेक्टर ऑफ आयुर्वेद (पंजाब)। इसमें शारीरिक निदान, नाड़ीज्ञान, रस प्रकरण और अष्टांग चिकित्सा आदि वैभव संबधी सभी विषय वर्णित हैं।

माधवनिदान–पं० दत्तरामजी चौबेकृत हिन्दीटीकासहित। इसमें संपूर्ण रोगों का कारण, उत्पत्ति, लक्षण, संप्राप्ति इत्यादि का वर्णन है।

योगचिन्तामणि–पं० दत्तराम चौबेकृत हिन्दीटीकासहित

सुश्रुत संहिता–हिन्दी टीका चार भागों में संपूर्ण

अष्टाङ्गहृदय–(वाग्भट) हिन्दीटीकासहित, इस वाग्भट कृत मूल की 'शिवदीपिका' नामक हिन्दी टीका पटियाला राज्य के प्रधान चिकित्सक वैद्यरत्न पं० रामप्रसादजी राजवैद्य के सुपुत्र पं० शिवशर्मा आयुर्वेदाचार्य ने ऐसी सरल बनाई है कि जो सर्वसाधारण के परमोपयोगी है।

हमारे यहाँ से विविध विषयों के लगभग तीन हजार प्रकाशन निकलते हैं। विस्तृत जानकारी के लिये बृहत्सूची पत्र मुफ्त मँगा देखिये।



हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०-२६८७४१०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

